खण्ड 2

ज्ञान–अज्ञान

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 1 ज्ञानी एवं अज्ञानी

इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 विषय का सामान्य परिचय

1.4 ज्ञानी तथा अज्ञानी का अर्थ, लक्षण

1.5 ज्ञानी तथा अज्ञानी के प्रकार

1.6 ज्ञानी एवं अज्ञानी के कारण

1.7 ज्ञानी एवं अज्ञानि के परिणाम/लाभ–हानि

1.8 अज्ञान एवं ज्ञानी बनने के उपाय

1.9 ज्ञानी की आवश्यकता/महत्त्व

1.10 ज्ञानी की सीमाएँ

1.11 सारांश

1.12 पारिभाषिक शब्दावली

1.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.14 बोध–प्रश्न

1.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप जान सकेंगे कि :

1. ज्ञानी कौन है?
2. अज्ञानी कौन है?
3. अज्ञान क्यों होता है? उसके क्या परिणाम होते हैं?
4. अज्ञान से कैसे युक्त हों? अथवा ज्ञान के स्रोत क्या है?
5. ज्ञान की क्या आवश्यकता या महत्त्व है?
6. ज्ञानी के क्या सावधानियाँ रखनी चाहिए?

1.2 प्रस्तावना

श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण गुरु है तथा अर्जुन शिष्य है। उसे अज्ञान के कारण मोह तथा शोक उत्पन्न होता है। वह अपने कर्त्तव्य से विमुख हो सन्यास लेकर भीख मांगने की बात करता है। वह श्रीकृष्ण से पूछता है कि उसे क्या करना उचित है यह निश्चय कर बतलायें। इस संवाद इस अज्ञान को दूर करने व कर्त्तव्य बतलाने पर ही

केन्द्रित है। अर्जुन की तरह ही समाज में अनेक लोग अज्ञानग्रस्त हैं। श्रीकृष्ण–अर्जुन का यह संवाद पूरे समाज के लोगों के अज्ञान को दूर कर उनको अपने कर्त्तव्य का बोध करायेगा तथा अपना कर्त्तव्य किस प्रकार करें यह बतालायेगा। अर्जुन को माध्यम बनाकर श्रीकृष्ण ने यह उपदेश आपका अज्ञान दूर करे कर्त्तव्य मार्ग पर बढ़ने में सहायक होगा।

गीता उपदेश महाभारत युद्ध के दौरान कुरूक्षेत्र में 5100वर्ष पूर्व किया गया उसकी ज्ञान परम्परा बहुत प्राचीन है। श्रीकृष्ण ने कहा, ''मैंने इस योग को (कर्मयोग को) सूर्य से कहा था। सूर्य ने अपने पुत्र वैवस्वत मनु से कहा। मनु ने यह योग अपने पुत्र राजा इक्ष्वाकु से कहा जो भगवान श्री राम के पूर्वज तथा इक्ष्वाकु कुल के संस्थापक थे। परम्परा से प्राप्त इस योग को अनेक महान् राजा ऋषियों ने जाना जीवन में अपनाया, किन्तु बाद में यह योग पृथ्वी लोक में लुप्त प्रायः हो गया। हे अर्जुन! तू मेरा भक्त है, मेरा प्रिय शिष्य सखा है। अतः वही पुरातन मोक्ष आज में तुमको कहता हूँ। यह बड़ा उत्तम रहस्य है, गोपनीय विषय है।'' (गीता अध्याय 4, श्लोक 1–3)

गीता के इस रहस्य मय योग का ज्ञान केवल अधिकारी श्रोता को ही दिया जाय। इसेक किसी तपरहित व्यक्ति को न दें। भक्ति रहित व्यक्ति, सुनने की इच्छा न रखने वाले लोग तथा जो भगवान श्रीकृष्ण में रोष–दृष्टि रखते हों (नास्तिक हो) वे भी इस ज्ञान के अधिकारी नहीं है। (गीता 18.67)। आप जाँच कर लें कि आप इन दोषों से मुक्त हैं तथाइस ज्ञान को पाने के अधिकारी हैं। आप परिश्रम करें, भक्ति भाव रखें, सुनने (पढ़ने) की इच्छा रखें तथा आस्तिक बनें तभी इस योग को पाने तथा जीवन में उतारने के योग्य बनोगे।

गीता पर सभी पूज्य जगद्गुरूओं ने अपने–अपने वेदान्त दर्शन के अनुसार टीकाएँ लिखी हैं। अद्वैत मार्गी आदि जगद्गुरुशंकराचार्य ने गीता योग को सन्यास मार्ग का योग प्रतिपादित किया है। ज.गु. मध्वाचार्य, रामानुजाचार्य, निंबकाचार्य तथा वल्लभाचार्य ने इस योग का केन्द्र विषय भक्ति को माना है। महान् गीता भाष्यकार श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने इस योग का केन्द्र विषय कर्म योग को माना है। हम गोखले के मत को आपके लिए जीवन उपयोगी मानकर आपको एक अच्छा कर्म योगी बनाने का उद्देश्य लेकर यह पाठ्य सामग्री प्रस्तुत करेंगे। यथासंभव दार्शनिक भार से युक्त रह कर पंथों के वाद–विवादों से बचाते हुए सरल बोधगम्य पाठ्य सामग्री प्रस्तुत करेंगे जिसका अध्ययन करके आप एक सफल कर्मयोगी का जीवन जी सकेंगे।

1.3 विषय का सामान्य परिचय

श्रीमद्भगवद् गीता कुरूक्षेत्र के युद्ध के मैदान में श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन के अज्ञान जनित शोक, मोह को दूर करके उसे अपना स्वधर्म (युद्ध) करने का निर्णय करने के लिए दिया गया था। यह स्वतंत्र पुस्तक नहीं है वरन् वेदव्यास रचित संस्कृत महाकाव्य महाभारत का ही अंतरंग अंग है। यह महाभारत के भीष्म पर्व में 700 श्लोकों व 18 अध्यायों में वर्णित है।

श्रीमद्भगवद्गीता को हम संक्षेप में 'गीता' कहकर सम्बोधित करेंगे। महाभारत में पराशर गीता, अनुगीता, अष्टावक्रगीता आदि पाँच गीतायें हैं। परन्तु हम श्रीमद्भागवद्गीता को ही गीता कहेंगे। इसका मुख्य कारण यह है कि अन्य सभी गीताएँ इसी के कुछ श्लोकों पर आधारित है। सम्पूर्ण गीता तो श्रीमद्भगवद् गीता ही

है। वही गीता के रूप में विश्वविख्यात है तथा उसाक अनुवाद विश्व की लगभग सभी प्रमुख भाषाओं में हुआ है।

गीता के प्रत्येक अध्याय के अंत में दिया गया कथन में उसे उपनिषद् कहा है जो श्रीकृष्ण ने आकर सुनाया। वह ब्रह्मविद्या, योगशास्त्र, श्रीकृष्ण–अर्जुन संवाद के रूप में है। प्रथम अध्याय में अर्जुन विषाद योग का वर्णन है। यह अज्ञान जनित मोह शोक के कारण उत्पन्न हुआ था। दूसरा अध्याय सांख्य योग (ज्ञान योग) का है, यद्यपि इसमें ज्ञानयोग तथा कर्मयोग व भक्ति योग का भी संक्षेप में वर्णन हुआ है। एक प्रकार से यह अध्याय गीता का सांराश (Synopsis/Outline) है। तीसरे अध्याय का मुख्य विषय कर्मयोग है जो गीता का मुख्य विषय है। चौथा अध्याय ज्ञानयोग तथा कर्मयोग दोनों पर है। पांचवे अध्याय का विषय कर्मयोग व ज्ञान योग है। छठे अध्याय का विषय 'आत्म संयम योग' है। यह महर्षि पतंजली के अष्टांग योग का भी वर्णन करता है। सातवां अध्याय निराकर ब्रह्म के ज्ञान तथा साकार ब्रह्म का विज्ञान दोनों विषयों 'ज्ञान–विज्ञान योग' नाम से वर्णन करता है। आठवें अध्याय का विषय 'अक्षर ब्रह्म योग' नाम दिया गया है। ग्याहरवां अध्याय 'विश्व योग दर्शन योग' का है। बाहरवां अध्याय 'भक्ति योग' विषय का है। तेरहवां अध्याय 'क्षेत्र–क्षेत्रज्ञ विभाग योग' विषय का है। चौदहवां अध्याय 'गुणत्रय विभाग योग' विषय का है। पंद्रहवा अध्याय 'पुरुषोत्तम योग' पर है। 'देवासुर सम्पत विभाग' 16वें अध्याय का विषय है। 17वां अध्याय 'श्रद्धात्रय विभाग योग' विषय पर है। अंतिम अध्याय 18वां 'मोक्ष सन्यास योग' विषय पर है जो एक प्रकार से पूरी गीता का सारांश है। संवाद के अंत में अर्जुन ने स्वयं स्वतंत्र चुनाव द्वारा घोषणा की कि मेरा मोह नष्ट हो गया है, मुझे स्मृति प्राप्त हो गई है, अब मैं संशय रहित हूँ तथा आपकी आज्ञा का पालन करूंगा।'' (18, 73) गीता का मुख्य ध्येय आप सबका अज्ञान, स्मृतिनाश, संशय/शंकाओं को दूर कर अपने कर्त्तव्य पालन में कर्मयोगी बनाकर लगा कर जीवन में विजय की व समृद्धि नीतिपूर्वक दिलाना है।

गीता माहात्म्य का वर्णन स्कन्दपुराण में हुआ है। माहात्मय या अपेक्षित लाभ गीता अध्ययन के निम्नलिखित हैं :–

1. भय शोक से अज्ञान से होते हैं वे नष्ट होंगे तथा विष्णु पद (मोक्ष) प्राप्त होगा।

2. गीता अध्ययन प्राणायाम सहित करने से पूर्वजन्म के पास नष्ट हो जाते हैं।

3. गीता के पवित्र जल में स्नान करने से काम, क्रोध, लोभ, ममता,म ोह, अहंकार आदि संसारी मल नष्ट होते हैं। अंतःकरण पवित्र होता है, शांति मिलती है।

4. श्रीकृष्ण के मुख कमल निकली गीता हमें अपने कर्त्तव्य का ज्ञान कराती है।

5. गीता रूपी गंगाजल पीने वाले का पुनर्जन्म नहीं होता। सभी वेद, उपनिषद (वेदान्त) रूपी गायों का दूध पीने को मिलता है। श्रीकृष्ण रूपी ग्वाले ने उन गायों को दूहा है। अर्जुन रूपी बछड़े ने इसे पीया है। इस गीता रूपी अमृत (दूध) को सुधीजन पीते हैं।

7. सारे शास्त्रों (श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास, धर्मशास्त्र) सबका एक ही शास्त्र है श्रीकृष्ण द्वारा गाथा गया गीता। एक ही देवता है श्रीकृष्ण। एक ही मंत्र है उनका नाम जप। एक ही कर्म (धर्म) है उनकी आज्ञा का पालन कर्मयोगी बनकर करना तथा उन्हीं की शरण ले उनको ही कर्म व फल समर्पित करना।

अतः गीता निष्काम कर्मयोगी बनाकर आज्ञान व बंधन से मुक्त करती है। भुक्ति–मुक्ति दोनों देती है। गीता आप पर कुछ थोपती नहीं है। आपका निर्णय होने का अधिकार सुरक्षित रखती है। शंका हो तो प्रश्न भी करें।

1.4 ज्ञानी व अज्ञानी का अर्थ, लक्षण

ज्ञान वह व्यक्ति है जिसे परमात्मा का तत्त्व ज्ञान है। उसमें ज्ञान का सूर्य उदय होने से अज्ञान का अंधेरा दूर हो गया है। सत् चित् आनन्द रूप परमात्मा का प्रकाश हो गया है। (गीता 5.16) ज्ञानादिन में उसके संयम, मोह, भ्रम, भय नष्ट हो गये हैं तथा वह कर्त्तव्य करने के लिए कर्मयोगी बन तत्पर हो गया है। (गीता 18.73)

हजारों में कोई एक ज्ञान के लिए यत्न करता है। ऐसे अनेक योगियों में भी कोई एक योगी परमात्मा तत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। (गीता 7.3) अतः ज्ञान तथा ज्ञान दुर्लभ हैं।

ज्ञानी को अपना प्रकृति तथा परा प्रकृति दोनों का भेद ज्ञात होता है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश (पांच महाभूत) तथा मन, बुद्धि, अहंकार ये आठ तत्त्वों की अष्टमा प्रकृति कहलाती है। परा प्रकृति जीवात्मा है जो सम्पूर्ण जगत को धारण करती है। यह परमात्मा की चेतन प्रकृति कहलाती है। (गीता 7.45)

अपरा प्रकृति का अध्ययन शिक्षा विज्ञान का विषय है। वेद, उपवेद, वेदांग, वार्ता (अर्थशास्त्र, वाणिज्य) दण्डनीति (शासन, कूटनीति, प्रशासन, न्याय) ये सब अपरा विद्या में आते हैं। इनको जानने वाला विद्वान–विशेषज्ञ होता है। वेदान्त या उत्तरमीमांसा/उपनिषद/आरण्यक), ब्रह्मसूत्र का सम्बन्ध आत्मा–परमात्मा के ज्ञान से है। इसके जानने वाला ज्ञानी कहलाता है। अपरा विषय परिवर्तनशील है जबकि परा लिया सत्य तथा अविनासी है। ज्ञानी मुक्त हो जाता हैं परन्तु अपरा विद्या का विद्वान माया के बंधन में पड़ा रहता है। अपरा विद्या वर्णन की जाती है। परा विद्या इन्द्रियातीत होने के कारण गूंगे के गुड़ के सवाल की तरह अवर्णनीय है।

ज्ञानी के लक्षण निम्नलिखित है :–

1. लोक–परलोक ने नश्वर भोगों में अनासक्ति होती हो।
2. अहंकार नहीं होता।
3. जन्य, परा, मृत्यु के दुःखों का बारंबार विचार करता है।
4. स्त्री, पुत्र, घर, धन में आसक्ति व ममता न होना।
5. प्रिय–अप्रिय की प्राप्ति में क्षमता बुद्धि होना।
6. परमात्मा की अनन्य विष्काम भक्ति करना।
7. एकांत व शुद्ध स्वरूप में रहने का स्वभाव।
8. विषयी लोगों से दूरी रखता है।
9. अध्यात्म ज्ञान में नित्य स्थित रहता है।
10. तत्त्वज्ञान के अर्थ रूप परमात्मा को ही देखता है। (गीता0 13.8–11)

अज्ञान वह है जो परमात्मा तत्त्व को नहीं जानता। जानकारी का अभाव है। मोह, ममता, शोक व भय से ग्रस्त हो कर्त्तव्य को करने से बचता है। दूसरे के कर्त्तव्य में रूचि लेता है। नश्वर संसार, इन्द्रिय भोगें, परिवार व सम्बन्धियों में आसक्त है। अशान्त है। जैसा गीता प्रथम अध्याय में अर्जुन अज्ञानी हो गया। कायर व नपुंसक बन गया। (गीता 1.47)

अज्ञानी के लक्षण निम्नलिखित हैं :–

(आप ज्ञानी के लक्षणों को उलट दें। वे अज्ञानी के लक्षण होंगे।)

1. लोक–परलोक के भोगों से आसक्ति होना।
2. काम–क्रोध, भय, ममता–मोह, अहंकार, ईर्ष्या–द्वेष, लोभ–छल–कपट, चोरी, अनावश्यक नश्वर पदार्थों का संग्रह, चंचल मन, इन्द्रिय विषय भोग में आसक्ति।
3. जन्म, जरा, मृत्यु के चक्र में बंधे रहना।
4. स्त्री, पुत्र, घर, धर्म में आसक्ति रख उनमें सुख की आशा करना।
5. प्रिय हो तो खुशी से पागल होना तथा अग्नि हो तो तनाव तथा अवसाद में डूब जाना।
6. नास्तिकता/सकाम भक्ति/सकाम वैदिक कम्र, यज्ञ, दान, तप में उलझे रहना/पाप–पुण्य के चक्र में फंसा रहना।
7. कामी, क्रोधी, ईष्या–द्वेष, लोभ–लालच तथा अहंकारी लोगों की भीड़ में रहने का स्वभाव। घोटले व जुए, वैश्वागामी लोगों का कुकर्म करना।
8. मिथ्या ज्ञान (अज्ञान) में नित्य स्थिति।
9. खाओ, पीओ, ऐश करो उधार लेकर भी इसी को तत्वज्ञान का अर्थ मानना।

आप ज्ञानी है या अज्ञानी? कारण सहित बताये।

आप ज्ञानियों के चरित्रों को भी पढ़ सकते हैं। यथा महाराजा जनक तथा उनके गुरुअष्टावक्र। इनका संवाद अष्टावक्र गीता में उपलब्ध है। अशिष्ट मुनि– योगवशिष्ट या महारामायण पुस्तक पढ़े। विदुर– विदुरनीति पढें। श्री–हनुमान तुलसी रामचरित मानस तथा वाल्मीकि रामायण में पढ़े। (इकाई–2 आप पढ़ चकु हैं।) ज्ञानी उद्धृत (भागवत महापुराण दशम खंड में पढ़ें)।

आप अज्ञानियों के चरित्र भी पढ़े। यथा राक्षस राज लंकेश रावण, मथुरेश महाराजा कंस, भक्त प्रहलाद के पिता हिरण्यकशिपु, चेदी नरेश शिशुपाल जिन्होंने श्रीकृष्ण को 100 गालियाँ की। (महाभारत सभापर्व, राजसूय यज्ञ खंड), महाराजा धृतराष्ट्र तथा उनका पुत्र दुर्योधन (महाभारत में पढ़े।) रावण राज लवणासुर (विष्णु पुराण अंश 5), राजा मिध्यक के पुत्र रूक्मी (भागवत महापुराण में पढ़े)।

कई बार ज्ञानी भी मोहग्रस्त होते हैं। उनको भी माया–मोह, शंका घेर लेते हैं। उनके प्रकरण हैं नारद मोह (रामचरित, मानस, बालकांड), गरूड मोह (रामचरित मानस उत्तरकांड), सती तथा पार्वती (रामचरित मानस बालकांड) संदेह–भ्रम दूर करने के लिए उनको दीर्घकाल तक किसी ज्ञानी के साथ सत्संग करना पड़ता है।

1.5 ज्ञान तथा अज्ञानी के प्रकार :

गीता के विभिन्न अध्यायों की विषय वस्तु के आधार पर ज्ञानी–अज्ञानी निम्न प्रकार के हो सकते हैं–

1. परा विद्या ज्ञानी, 2. आत्म ज्ञानी, 3. समता बुद्धि या स्थित प्रज्ञा, 4. ज्ञान–योग सन्यासी, 5. कर्म योगी, 6. ध्यान योगी, 7. ज्ञान–विज्ञान योग ज्ञाता, 8. अक्षर ब्रह्म योगी, 9. राजविद्या राजगुह्य गुप्तयोग ज्ञानी, 10. भक्ति योगी, 11. क्षेत्र–क्षेत्रज्ञ विभाग ज्ञानी, 12. गुणत्रय विभाग ज्ञानी, गुणातीत योगी, 13. क्षर–अक्षर–पुरुषोत्तम ज्ञानी, 14. दैवासुर सम्पद विभाग ज्ञानी, 15. श्रद्धात्रय विभाग ज्ञानी।

इनका अभाव होने पर होता है। जैसे– 1. नश्वर पदार्थों में मोह–ममता, कला अज्ञान, 2. शरीर का भौतिक पदार्थों तथा इसके सम्बन्धों में मोह, ममता।

यह सत्य ही कहा है कि मैं तथा मेरा की माया वाला परम अज्ञानी है तो तूं तथा तेरा (इदमनममः) वाला परम ज्ञानी है।

संसारी द्वन्द्वों (हानि लाभ, सुख–दुःख) में जिसकी बुद्धि अस्थिर हो वह अज्ञानी है? कर्म सन्यास लेकर भी कर्म में आसक्त व्यक्ति अज्ञानी/पाखंडी है। ध्यान योग मात्र नश्वर भौतिक लाभों के लिए करे वह अज्ञानी है। आत्म–परमात्मा के ज्ञान न हो वह कितना ही बड़ा विद्वान हो तो भी अज्ञानी है? क्षेत्र–क्षेत्रज्ञ पुरुषोत्तम को न जानने वाला अज्ञानी है। जो स्वयं को कर्त्ता माने व फल में आसक्त रहे वह अज्ञानी है। तीन गुणों का वर्गीकरण न जाने वह भी अज्ञानी है। तीन गुणों के बंधन में तथा व्यक्ति भी अज्ञानी है। अपने आसुरी सम्पद को (काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, अहंकार, राग–द्वेष, ईर्ष्या–भावना, छल–कपट, हिंसा, चोरी तथा अनावश्यक नश्वर वस्तुओं का संग्रह करना) न इसके या जानकर भी उनका त्याग न करें वह भी अज्ञानी है। कर्म सन्यास तथा कर्म फल सन्यास का अन्तर न करे वह भी अज्ञानी है। जो विविध कर्त्तव्यों में उलझा रहे तथा परमात्मा की शरण ले अपना स्वधर्म न करे वह भी अज्ञानी है। ज्ञान का परम शत्रु स्वार्थ की कामनायें हैं।

शंका, संदेह–भ्रम वाले ज्ञानी मझधार में होते हैं। जैसे अर्जुन/सक्षम गुरुमिले तो संसार–चक्र दूर हो पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

1.6 ज्ञानी–अज्ञानी होने के कारण/स्रोत :

ज्ञानी के ज्ञान के स्त्रोत हैं शास्त्र अध्ययन (स्वाध्याय), ज्ञान गुरुके सानिध्य में दीर्घकालीन सत्संग करना। सभी शास्त्रों को निचोड़ श्रीमद्भगवद्गीता तथा रामायण/रामचरित मानस में उपलब्ध है। वेदान्त के आधार 10 मुख्य उपनिषद तथा ब्रह्मसूत्र भी ज्ञान के अच्छे स्रोत है। ज्ञान के स्त्रोत तक पहुँचने के लिए दो शर्ते हैं– तमोगुण (अज्ञान का विपरीत ज्ञान के अंधकार, आलस्य, प्रमाद, दीर्घसूत्रता) को त्यागकर, रजोगुण (।बजपवद) ज्ञान–अज्ञान, विवेक जमावें तथा ज्ञानी गुरुकी तलाश करें, अपने सब पूर्वाग्रह त्याग करें तथा समिधा हाथ में लेकर ज्ञानी को अर्पण कर दण्डवत् प्रणाम करें, उसकी सेवा करें, गुरुबनावें, शरणगति लें तथा सांख्य मार्गदर्शन के लिए निवेदन करें। (गीता0 4.34) जैसा अर्जुन ने श्रीकृष्ण को निवेदन किया। (गीता 2.7) दीर्घकाल तक सत्संग करो। शंका समाधान के लिए आदरपूर्वक प्रश्न करो। जैसा अर्जुन ने गीता में अनेक बार किया।

दीर्घकाल तक सत्संग करने के अंत में आप सत्वगुण (ज्ञान का प्रकाश) स्वयं के अन्तःकरण में अनुभव करेंगे। आत्मानुभूति (Sub-rember) को प्राप्त कर मोक्ष के अधिकारी बनोगे।

ज्ञान का एक अच्छा स्त्रोत स्वतः प्रयोग करके अनुभव से सीखना भी है। इसे विज्ञान कहते हैं। शुद्ध विज्ञान के विषयों में तो प्रयोगशास्त्र होती है। परन्तु समाज विज्ञान में तो पूरा समाज ही प्रयोगशास्त्र है। ऐसे वैज्ञानिक हमारे समाज के अनुभवी लोग (वरिष्ठ जन) होते हैं। जैसे महाभारत युद्ध के अंत में महाराजा युधिष्ठिर को अपने लोगों के युद्ध में मारे जाने से वैराग्य हो गया। वे शासन करने के बजाय सन्यास लेने की सोचने लगे। श्रीकृष्ण उनको बाण शय्या पर पड़े भीष्म पीतामह के पास राजधर्म पर उपदेश दिलाने ले गये। भीष्म के पास शासन का या राजधर्म का शास्त्रीय ज्ञान के अतिरिक्त अनुभव आधारित विज्ञान भी था। 56 दिन के प्रशिक्षण के अंत में युधिष्ठिर को स्वधर्म का ज्ञान प्राप्त हुआ। फिर उन्होंने 30 वर्ष तक सुशासन किया। (महाभारत शांतिपर्व पढ़ें)

युवा श्रीराम को भी ऐसा वैराग्य जगा तब वशिष्ट जैसे अनुभव सिद्धज्ञानी ने दीर्घकाल तक उपदेश देकर उनका अज्ञान दूर किया। (देखें योगवाशिष्ठ या महारामायण जो मन के नियंत्रण पर एक अनुपम कृति है। आज इसका अवश्य लाभ लें।)

अज्ञान का मुख्य स्त्रोत तमोगुण है, जो अंधकार देता है। व्यक्ति अज्ञान को ही ज्ञान मान लेता है। निद्रा, आलस्य, प्रमाद, दीर्घसूत्रता व्यक्ति को घेर लेते हैं। ऐसे व्यक्त को पहले तमोगुण से रजोगुण में जाना होगा। ज्ञान पाने या अज्ञान दूर करने के विविध उपायों में से सुलभ उपाय को अपनाना होगा।

अर्जुन के अज्ञान का कारण शोक, मोह, ममत्व, भय आदि थे। वह क्षत्रिय कार्य के मूलभाव था। यही गीता ज्ञान के संवाद से दूर हुआ तथा श्रीकृष्ण ने उसके विषाद को प्रसाद (विजय, श्री, विभूति, नीति, कीर्ति) में बदल दिया। आप भी गीता अध्ययन करके तथा उसे जीवन में उतारकर ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं जो अर्जुन की तरह ही आपको भी जीवन संग्राम में सफल बना देगा। गीता उपदेश का ज्ञान भारत को विश्वगुरुबना एक बड़ी शक्ति बना देगा यदि हमारे देश के युवा कर्मयोग को समझ कर जीवन में उतार लें। जब किसान, श्रमिक, विद्वान (शिक्षक तथा शिष्य), शासक व प्रशासक, पुलिस, न्यायाधीश, व्यापारी, उद्योगपति, बैंकर्स, कर्मचारीवर्ग, पेशेवर लोग (डॉक्टर, वकील, इंजीनियर, सी0ए0, कम्पनी सचिव आदि) अपने कर्त्तव्य (स्वधर्म) को तथा आचरण संहिता को समझ लेंगे तथा कर्मयोगी बन कर अपना कर्त्तव्य करेंगे तो भारत को एक आर्थिक महाशक्ति बनने में कोई नहीं रोक सकेगा। बस आवश्यकता है अज्ञान के अधिकार से ज्ञान के प्रकाश की ओर जाने की। उपनिषद भी यही उद्घोष करते हैं–

तमसो मा ज्योतिर्गमय
असतो मा सद्गमय
मृत्योर्मा अमृतंगमय

गीता ज्ञान आपको अज्ञान के तमोगुण से ज्ञान के प्रकाश में ले जाय, असत्य से सत्य की ओ ले जाय तथा मरणधर्मा को अमर बना दे स्वधर्म पालन कर्मयोग द्वारा।

1.7 ज्ञानी व अज्ञानी के परिणाम/लाभ–हानि :

ज्ञानी सत्वगुण की स्थिति में होता है जो ज्ञान के प्रकाश तथा शांति प्रदान करता है। उसकी सभी शंकायें व संशय, भ्रम दूर हो जाते हैं। वह भक्ति करने या कर्मयोग के लिए तैयार हो जाता है। कर्मयोग से उसे श्री (वैभव, संतोष, कीर्ति, नीति आदि) प्राप्त होते है। जीवन में सर्ग (शांति व संतोष) प्राप्त हो जाते है। मुक्ति मिल जाती है।

अज्ञानी, तमोगुण की स्थिति में होता है। यह ज्ञान का अभाव होने या अज्ञान को ज्ञान मान लेने से अंधकार में डूब जाता है। संशय, भ्रम, मोह, ममता, भय आदि का शिकार हो अपने कर्तव्य से विमुख हो जाता है। यह निद्रा, आलस्य, प्रमाद तथा दीर्घसूत्रता का शिकार हो जाता है। आचरण संहिता भंग करता है। एक बुरे व्यक्ति (कामचोर, बेईमान, कायर, नपुंसक) की खराब पहचान उसे मिलती है। उसका मनोबल गिर जाता है। बदनाम होने पर तनावग्रस्त हो जाता है। कानूनी पचड़े में भी पड़ सकता है। सजा व जुर्माने का भय सताने लगता है। जीवन नरक बन जाता है। बंधन में पड़ जाता है।

ज्ञानी को वैसे ही लाभ ही लाभ होते हैं परन्तु कभी–कभी ज्ञान को को भी नुकसान हो सकते हैं–

1. ज्ञान का अहंकार होने से उसका पतन हो सकता है। जिह्वा चाहे उपदेश दे तो उसका अपमान हो सकता है।
2. ज्ञानी की प्रकृति शुष्क या रूखेमन की हो सकती है। इससे उसके दूसरे लोगों से सम्बन्ध बिगड़ सकते हैं।

ज्ञानी को अहंकार से सावधान रहना चाहिए। लोकेषणा से भी बचें। अनावश्यक उपदेश न दे। सब प्राणियों में प्रभु के दर्शन करें। भक्ति व प्रेम भी जीवन में लाये।

एक सावधानी ज्ञान को और रखनी होगी वह ज्ञान के अतिरेक सेबचे। अधिक ज्ञान भी नये–नये संशय, भ्रम तथा अशान्ति का कारण बन जाता है। याद रहे कि 'अति सर्वत्र वर्जयेत' अधिक तैराक डूब भी जाता है।

अब अन्य अज्ञानी को कोर्ठ लाभ हो सकता है क्या? हानियाँ तो बहुत होती हैं अज्ञानी को यह तो आप देख ही चुके है। अज्ञानी किसी कानून के शिकंजे से तो यह तर्क देरक नहीं बचा सकता कि उसे कानून का ज्ञान नहीं था। परन्तु वह अज्ञानी है इस आधार पर कार्य के बोझ से क्या रह सकता है। एक कहावत है ''जो सुख चाहे जीव को तो भोंदू (अज्ञानी) बन कर रहा।' अज्ञानी व्यक्ति की कोई सलाह भी नहीं मांगेगा। हाँ, वह लोक निन्दा का मात्र बन सकता है।

1.8 अज्ञानी से ज्ञानी बनने के उपाय :

अज्ञानी को ज्ञानी बनने के लिए शास्त्र का सन्यास करना होगा। उसे तमोगुण के अंधकार से बाहर निकलना होगा तथा रजोगुण में जाना होगा। इसके कारण निम्नलिखित हैं–

1. **अज्ञान की स्वीकृति** : पहते तो स्वयं इस कटु सत्य को स्वीकार करें कि उसे अज्ञान है या वह अज्ञानी है। इसके लिए बड़े ऊँचे नैतिक मनोबल की आवश्यकता होती है। अज्ञानी ऐसा भ्रम पाल लेता है कि वह तो ज्ञानी है। शंकर प्रिया दास सुता सती की ऐसी ही स्थिति थी।

2. **ज्ञानी बनने की उत्कट इच्छा :** ''मैं अज्ञानी हूँ'' इस कटु सत्य को स्वीकार करने के बाद मैं ज्ञान पाना चाहता हूँ। इसकी तीव्र प्यास होनी चाहिए। ज्ञान पाने की सच्ची प्यास हो तभी ज्ञान पाने का प्रयत्न हो सकता है। जो ऐसा सोच ले कि मैं अज्ञानी हूँ तो क्या हुआ? मैं अकेला ही ऐसा थोड़े ही हूँ, ऐसे तो बहुसंख्यक (बहुमत में) है? मुझे अज्ञान से कोई तकलीफ नहीं हो दूसरों के रूप से क्या तकलीफ है? ऐसा सोच त्यागे तथा ज्ञान पाने की तीव्र प्यास जागे तभी आगे ज्ञान की ओर कदम बढ़ेगे।

एक बार एक संत ने एक महाजन साहूकार को स्वर्ग में जाने का उपाय बताने का बहुत प्रयत्न किया। संत बोले, ''सेठ जी! स्वर्ग में तो हजारों में से कोई भाग्यशाली के ही प्रवेश मिलता है। यदि आपको मिल जायतो आप बड़े भाग्यशाली होंगे। भगवान के विशेष कृपा पात्र होंगे।''

सेठ ने बहुत विचार किया तथा प्रश्न किया, संत जी! आपके मेरे को स्वर्ग ले जाने के लिए चुना सो तो ठीक है। परन्तु वहाँ कम लोग होंगे तोमैं धन उधर किन को दूंगा? वहाँ मेरे धंधों का कोई भविष्य नहीं होगा। आप यह कृपा किसी ढाले बैठे मनुष्य पर करो।''

संत ने अपना माथा पकड़ लिया।

अज्ञान के जल में जीने वाली मछली ज्ञान की धरती पर जाकर बाहर जल के बिना नहीं जी सकती।

3. **पुरुषार्थ :** ज्ञान माना है, ज्ञानी बनना है जब यह दृढ़ निश्चय हो जाय तब पुरुषार्थ प्रारंभ करो। इसके तीन विकल्प हैं –

मार्ग–1. स्वाधयाय : गीता जैसे ज्ञान के भंप्रद का कोई मानक पुस्तक लेकर स्वयं अध्ययन करो। निरंतर अभ्यास करो। महर्षि पाणिनी विश्वप्रसिद्ध वयाकरण के आचार्य बने। वे बचपन में मंद बुद्धि थे। अज्ञान के कारण दुःखी होकर वे एक कुए में पड़कर आत्म हत्या करने गये। वहाँ कुए के पत्थर पर पानी खींचने की डोरी के घिसने से पड़ा निशान देखा। उनका खोया हुआ ज्ञान जग गया। जब रस्सी की रोजाना चोट से पत्थर घिस सकता है तो निरंतर अभ्यास करने से क्या मुझे ज्ञान नहीं मिल सकता? बस इतना सोचते ही ज्ञान का प्रकाश हुआ। उन्होंने निरंतर कठोर अभ्यास किया तथा विश्व प्रसिद्ध व्याकरण के विद्वान् बन गये।

मार्ग–2. ज्ञान गुरु के साथ सत्संग : किसी ज्ञानी गुरुके पास अंजलि में स्वमिधा/पुष्प ले जायें। उनको दंडवत् प्रणाम करें। ज्ञान देने की प्रार्थना करें। ध्यान से इनका उपदेश सुनें। संदेह हो तो आदर सहित प्रश्न करें। दीर्घकाल तक सत्संग से ज्ञान प्राप्त करें। अर्जुन ने श्रीकृष्ण को गुरुबनाया। संवाद किया। प्रश्नोत्तर हुए। पार्वती जी ने भगवान शंकर से रामचरित मानस का उपदेश सुनकर अपना संदेह दूर किया, ज्ञान प्राप्त किया। (शिव पुराण तथा रामचरित मानस) राजा परीक्षित ने शुकदेव से भागवत् प्रवचन सप्ताह द्वारा ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त किया। (भागवत महापुराण)

मार्ग–3 : अनुभव सिद्ध ज्ञानी (विज्ञानी) से प्रशिक्षण लें :

सम्राट युधिष्ठिर को जब वैराग्य हुआ तथा सन्यास लेने का विचार कियातब दादा भीष्म जैसे राजधर्म के विज्ञानी से प्रशिक्षण किया। राजधर्म से मोक्ष पाने का उपाय जाना। (महाभारत शांति पर्व)

महाराजा धृतराष्ट्र ने राजधर्म का उपदेश अपने ही पूर्व प्रधानमंत्री तथा छोटे भाई विदुर से लिया। आत्मा–परमात्मा का ज्ञान ब्रह्मा जी के पुत्र सनदसुजात मुनि से लिया। (महाभारत उपयोग पर्व)

तुलाधर वैश्य ने धर्मनीति पूर्वक व्याख्या करके मोक्ष पाने का मार्ग गाजादिमुनि को कहा। (महाभारत)

परम ज्ञानी राजमुनि महाराजा जनक ने रात्रि में स्वप्न में भूख से व्याकुल हो सुबह जागे। राज दरबार में गये। शंका प्रस्तुत की, ''सपने वाला भूख से व्याकुल जनक सत्य है या उस सिंहासन पर बैठा महाराजा जनक सत्य है?''

बड़े–बड़े ज्ञ्ज्ञनी उत्तर नहीं दे पाये। एक 12 वर्ष का कुरूप युवा ऋष्ज्ञि ने जनक की शंका का निराकरण किया, ''सपने वाला जनक असत्य है तथा महाराजा जनक मिथ्या है।'' असत्य जाने–झूठ, जिसका कोई अस्तित्व नहीं होता। मिथ्या जाने झूठे नहीं, सच भी नहीं, भौतिक माया नश्वर है जो मिटता हैं। महाराजा जनक संतुष्ट हो गये इस उत्तर से तथा युवा ऋषि अष्टावक्र को अपना गुरु बना लिया। (अष्टावक्र गीता पढ़ें)

आप अज्ञानी से ज्ञानी बनने के लिए उपरोक्त तीन मार्गों में से जो आपके अनुकूल हो वह चुन लें।

ज्ञानी को भी शंका हो सकती है जैसे राजा राजऋषि जनक को हुई। भगवान विष्णु के परम भक्त नारद को हुई। भगवान विष्णु के परम सेवक गरूड़ को हुई। आप गरूड मोह की कथा का भी संक्षिप्त अध्ययन कर लें। कई बोध पाठ इसमें हैं।

श्रीराम–लक्ष्मण को लंका युद्ध में मेघनाद ने माया पाश में बांध दिया। हनुमान गरूड को बुला लाये। गरूड ने नाग पास ले काट दिया परन्तु श्रीराम के ब्रह्म होने में उनको शंका हो गई। ब्रह्मा के पास गये। ब्रह्मा ने महादेव के पास भेजा। महादेव से मार्ग में भेंट हुई। महादेव ने सोचा कि मैं मार्ग में जा रहा हूँ। इनकी शंका भ्रम का निवारण तत्काल नहीं होगा। इन्हें तो दीर्घकाल तक सत्संग करना होगा। मै। इनको काकमुशंडी के यहाँ भेज देता हूँ। ज्ञान प्राप्ति में 'रक्षा जानहिं खग की भाषा' से सुविधा होगी समझने में। कभी गरूड ने पक्षीराज होने का व विष्णु के प्रिय सेवक होने का अहंकार किया यह भी काकभुशुंडी के पास जाने से गल जायेगा।

इस घटना से तीन शिक्षायें मिलती है। दीर्घकालीन निरंतर सत्संग से ही संशय–भ्रम टूट होकर ज्ञान मिलता है।

स्वयं की भाषा से सत्संग हो तो ज्ञान पाना सरल होता है।

अहंकार त्याग कर ज्ञानी गुरुकी शरण ले। उसके ऊँचे–नीचे वर्ण का विचार न करो। ज्ञान तो नीचे प्राणी से भी ग्रहण करो।

ऐसे उनके उदाहरण आपको महाभारत तथा रामायण महाकाव्यों में मिलेंगे। बड़े–बड़े ज्ञानी भी संवाद में पड़ गये। अर्जुन भी ज्ञानी थें, महारथी थे। उनका मोह, शोक, संशय, श्रीकृष्ण जैसे विश्व के जगद्गुरुही दूर कर सके।

1.9 ज्ञानी की आवश्यकता/महत्त्व :

ज्ञानाग्नि सब संशय व्यक्ति को, भ्रम को जला कर राख कर देती है।

ज्ञानी दूसरे अज्ञानियों का अज्ञान, संशय, भ्रम दूर करने के लिए आवश्यक है।

मोक्ष ज्ञानी को प्राप्त होता है। ज्ञानी ही किसी अज्ञानी का गुरु बन उसे परमात्मा तत्त्व (मोक्ष पद) प्राप्त कराता है। यह महत्त्वपूर्ण कार्य अपरा विद्या (भौतिक नश्वर विद्या) से नहीं होता। यह अपराविद्या (आत्म–परमात्मा के ज्ञान) से ही संभव है।

ज्ञानी मोक्ष पाता है तो अज्ञानी, संशमात्मा नष्ट हो जाता है। न उसे इस लोक में न परलोक में सुख मिलता है। अतः ज्ञानी की आवश्यकता या महत्त्व अज्ञानी का अज्ञान दूर कर बंधन मुक्त करने के लिए। गीता में ज्ञान के तीन प्रकार कहलाये हैं–

1. **सात्विक ज्ञान** : परमात्मा तत्त्व का एकीकृत ज्ञान। यह अपरोक्ष एवं अनुभूति का विषय है। यह इन्द्रियातीत तथा अव्यक्त है। सत्य, सनातन/शाश्वत् है। अनन्त है। इसमें पक्ष–विपक्ष की तुलना में, तर्क या वाद–विवाद नहीं होते। यह प्रकाश व शांति देता है।

2. **राजसिक ज्ञान** : विभिन्न भूतों में भिन्न–भिन्न भावों में पृथक–पृथक देखना यह राजसी ज्ञान है। इसमें बुलवायें तथा वाद–विवाद होता है।

3. **तापसी ज्ञान** : शरीर ही सबकुछ है। उसी में आशक्त होना। नश्वर, वस्तुओं में सुख ढूंढ़ना। यह बिना मुक्ति वाला, तात्विक अर्थ सहित व तुच्छ है। यह तामसी ज्ञान कहलाता है। (गीता 18.22)

ज्ञानी को एक चेतावनी दी है श्रीकृष्ण ने गीता में। वे अपने से कम ज्ञानियों को अधिक ज्ञान देकर वे जो सकाम कार्य भी कर रहे हैं उसे कर्म से विरक्त न करें। उनको ज्ञान में भ्रमित न करें। (गीता 3.26)

1.10 ज्ञानी की सीमाएँ :

आप यह जान चुके हैं कि ज्ञानी का पतन अहंकार द्वारा होता है। भक्ति व प्रेम हीन ज्ञानी में रूखापन होने से आपसी सम्बन्ध बिगड़ सकते हैं। अति ज्ञान से संशय होता है। इससे भी ज्ञानी अज्ञानी बन जाते हैं। उसको भी संशय निवारण के लिए पुनः दीर्घकाल तक सत्संग करना पड़ता है।

ज्ञानी कई बार अति उत्साह में कम ज्ञानियों को क्षमता से अधिक ज्ञान दे देते हैं। ज्ञान का अजीर्ण होने से वे कर्म सन्यास की ओर चले जाते हैं। फिर ऐसे कच्चे वैरागियों का वैराग्य राग में बदल जाता है। इससे ज्ञानी की प्रतिष्ठा की प्रतिष्ठा की हानि होती है। ज्ञान अपात्र को देकर ज्ञानी बनाने का प्रयास न करें ज्ञानी।

ज्ञान का उद्देश्य भौतिक लाभ पाना नहीं है। यह तो मोक्ष या बंधन मुक्ति के लिए होता है। ज्ञानी का भी यही उद्देश्य होना चाहिए।

ज्ञानी को कर्म सन्यास लेना हो तो इन्द्रिय विषयों में कर्म आसक्ति को भी त्यागना होगा। कर्मफल सन्यास लें। वेद, यज्ञ, ज्ञान, तप भी बिना फल की आकांक्षा के तथा

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

कर्त्तापन का अहंकार त्याग कर करें। ज्ञानी को भी लोक कल्याण हित में निष्काम कर्म अवश्य करना चाहिए। जैसे नारद ज्ञानी हैं परन्तु लोक कल्याण के लिए कर्म करते हैं।

ज्ञानी स्वयं के अंतर का ज्ञान द्वीप स्वयं जलाने व प्रकाश पायें व शांति/सन्तोष पाने के बाद ही दूसरों के अन्तःकरण में ज्ञान दीपक जलाने का कार्य करें। अपात्र को कभी ज्ञान न दें।

1.11 सारांश :

ज्ञानी वह है जिसे परमात्मा का तत्त्व ज्ञान हो। जिसे यह परा ज्ञान नहीं है वह अज्ञानी है चाहे उसे अपरा विद्या कितना ही ऊँचा क्यों न हो। ज्ञानी सत्वगुण के प्रकाश तथा शांति में जीवन जीता है, तथा मोक्ष प्राप्त करता है। अज्ञानी काम–क्रोध, लोभ, मोह, राग–द्वेष, अहंकार की आसुरी वृत्तियों में फंसा जन्म, जरा, मृत्यु व पुनर्जन्म के चक्र में फंसा बंधन में पड़ता है। ज्ञानी–अज्ञानी के लक्षण एक दूसरे के विपरीत होते हैं।

गीता ज्ञान का उपदेश मोह, शोक, शंका जनित अज्ञान को दूर कर ज्ञान योग, बुद्धि योग, ध्यान योग, भक्ति योग से कर्म योगी तैयार करना है जो स्वधर्म करके मोक्ष को प्राप्त कर ले।

ज्ञानी–अज्ञानी के अनेक प्रकार हैं। इनके अनेक कारण/स्रोत हैं। ज्ञानी–अज्ञानी के कई लाभ–हानि तथा सीमायें हैं। अज्ञानी से ज्ञानी बनने की प्रक्रिया तीन चरणों में होती है। 1. अज्ञानी हूँ। इस कटु सत्य की स्वीकृति, 2. ज्ञान की तीव्र प्यास, 3. अज्ञान से मुक्त होने के लिए तीन विकल्पों में से किसी एक का चुनाव। ये हैं तथा अभ्यास, ज्ञानी गुरुके साथ सत्संग तथा प्रश्नोत्तर पद्धति से विज्ञानी (अनुभवी) गुरुसे प्रशिक्षण लेना।

ज्ञानी की आवश्यकता अथवा महत्त्व स्वयं के मोक्ष के लिए है तथा अन्य का अज्ञान दूर करके उनको मोक्ष दिलाने के लिए है। परन्तु ज्ञानी को ज्ञान के अहंकार से बचना चाहिए। अपाक को ज्ञ्ज्ञन देकर भ्रमित नहीं करना चाहिए। स्वयं को भी ज्ञान के अतिरेक से बचना चाहिए।

ज्ञान/ज्ञानी के प्रकृति तीन गुणों के आधार पर तीन वर्ग हैं– सात्विक ज्ञान एकीकृत या अभेद, राजसिक ज्ञान भेद व तुलना वाला, वाद–विवाद वाला, तामसिक ज्ञान विपरीत ज्ञान है। आपको सात्विक ज्ञान की आवश्यकता है। वही मोक्ष दिला सकता है।

ज्ञानी की सीमाएँ हैं– अहंकार, रूखापन, ज्ञ्ज्ञन के अतिरेक से संभव, अति उत्साह व लोकेषणा की भूख पूरी करने के अपात्रों को ज्ञान के लिए उनमें कर्म सन्यास का भाव जगाना जो स्थायी न होने से ज्ञानी की बदनामी करा देते है।।

ज्ञानी कर्म सन्यास ले तो उसे कर्म आसक्ति ज्ञान से त्यागनी होगी। अन्यथा वह दंभ–पाखंड होगा।

ज्ञानी को भी कर्मयोगी बन लोक कल्याण के लिए कार्य करना चाहिए ऐसा श्रीकृष्ण का निर्देश है। वैदिक कर्म, यज्ञ, दान, तप भी निष्काम भाव से करें।

1.12 पारिभाषिक शब्दावली

ज्ञानी, अज्ञानी, संशयात्मा, ज्ञानी गुरू, विज्ञानी मार्गदर्शक, बंधन, मोक्ष, बुद्धियोग, ज्ञानयोग, परा विद्या, अपरा विद्या, कर्म योग, ध्यान योग, क्षेत्रज्ञ, पुरुषोत्तम, त्रिगुणात्मक प्रकृति, दैवासुर सम्पद व अक्षर ब्रह्म योग।

1.13 सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. जयदयाल गोयन्दका : श्रीमद्भगवद्गीता तत्व विवेचनी, हिंदी टीका, गीता प्रेस, गोरखपुर।
2. रामचरित मानस (82) गीता प्रेस, गोरखपुर।
3. स्वामी राम सुखदास : गीता परमार्थ, हिन्दी टीका, गीता प्रेस, गोरखपुर।
4. श्रीमद्भगवद्गीता (1658) अंग्रेजी टीका, गीता प्रेस गोरखपुर।
5. प्रभुपाद स्वामी : गीता यथा रूप, इस्कॉन, जुहू, मुंबई।
6. खण्डेलवालः भारतीय प्रबन्धन गुरुश्रीकृष्ण, मीक्षा (फ्रेंडस), दिल्ली, 2023
7. खण्डेलवालः भारतीय प्रबन्धन गुरुअष्टावक्र मुनि, मीक्षा (फ्रेंडस), दिल्ली
8. खण्डेलवाल : भारतीय प्रबन्धन गुरुज0गु0 शंकराचार्य, मीक्षा (फ्रेंडस), दिल्ली, 2024

1.14 बोध प्रश्न :

1. ज्ञानी का अर्थ बतायें। उसके क्या लक्षण हैं
2. अज्ञानी का अर्थ बतायें। उसके क्या लक्षण हैं?
3. ज्ञानी–अज्ञानी के स्त्रोत बताये।। इसमें प्रारब्ध से क्या भूमिका है?
4. ज्ञानी–अज्ञानी के लाभ–हानि व सीमाओं का वर्णन करें।
5. ज्ञानी–अज्ञानी के प्रकार बतायें।
6. ज्ञानी–अज्ञानी के परिणाम बतायें।
7. अज्ञानी से ज्ञानी बनने की प्रक्रिया बतायें।
8. ज्ञानी की आवश्यकता/महत्त्व समझाइए।
9. ज्ञानी की सीमायें बतलायें।
10. ज्ञानियों के मोह के प्रसंगों का वर्णन करो। इनसे आप क्या सीखते हो? (कोई से दो प्रकरात् चुनें वर्णन तथा विश्लेषण के लिए)।
11. ज्ञानियों को क्या सावधानियाँ रखनी चाहिए?

इकाई 2 मोह का मनोविज्ञान

इकाई का परिचय

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 विषय का सामान्य परिचय

2.4 मोह का अर्थ

2.5 मोह के कारण

2.6 मोह के परिणाम– ज्ञान योग, भक्ति योग तथा कर्मयोग में बाधा

2.7 मोह दूर करने के उपाय

2.8 सारांश

2.9 पारिभाषिक शब्दावली

2.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.11 बोध प्रश्न

2.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करके आप जान सकेंगे कि :

1. गीता के अनुसार मोह क्या है?
2. यह किन मनोवैज्ञानिक कारणों से उत्पन्न होता है?
3. मोह के क्या मनोवैज्ञानिक दुष्परिणाम क्या होते हैं?
5. मोह दूर करने के मनोवैज्ञानिक उपाय क्या हैं?

6. मोह और मनोविज्ञान का सम्बन्ध क्या है?

2.2 प्रस्तावना

इकाई प्रथम में आप गीता के आध्यात्मिक दर्शनशास्त्र का अध्ययन कर चुके हैं। अज्ञानी का क्या दर्शन होता है? अज्ञानी अज्ञान के अंधकार से बाहर निकलने के लिए कौन से दार्शनिक उपाय कर सकता है? इसके पश्चात् अब आप मोह का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करेंगे। इसे हम गीता का आध्यात्मिक मनोविज्ञान भी कह सकते हैं। इस अध्ययन में आप मोह के मनोवैज्ञानिक स्वरूप, मनोवैज्ञानिक कारणों, मनोवैज्ञानिक दुष्परिणामों तथा मोह से मुक्ति के मनोवैज्ञानिक उपायों का अध्ययन करेंगे। व्यक्ति का मोहग्रस्त होना एक सामान्य जीवन की घटना है। इस जीवन की घटना या स्थिति को या मनोविकार को आपने भी जीया होगा। यथा परिवार में किसी सदस्य की बीमारी अथवा मृत्यु पर मोह का आपके मन पर प्रभाव (शोक ग्रस्त होना) ऐसी संभावना निकट दिखने पर मन पर प्रभाव (भय व चिंता होना), परीक्षा कैसी

होगी? कैसा परिणाम आयेगा? सफलता–असफलता का द्वन्द्व, फलासक्ति (चिन्ता)। थोड़ा परिणाम अपेक्षा से कम मिलने पर मन पर बुरा प्रभाव (निराशा, अवसाद, तनाव, क्रोध, ईर्ष्या आदि के भाव उत्पन्न होना।)

अच्छी सफलता मिल जाय तो मन खुशी में डूब जाय या अहंकार भाव उत्पन्न हो जाय। मोह जनित लगाव तथा अवसाद अनेक जान लेवा बीमारियों तथा आत्म हत्याओं का भी कारण बनते हैं। यह सब आपने जीवन में अनुभव किये होंगे। गीता आपके जीवन की इस बड़ी समस्या का किस प्रकार मनोवैज्ञानिक हल प्रदान करती है यह आप इस इकाई में अध्ययन करेंगे। आप जीव सेवा बीमारियों तथा आत्म हत्या जैसे पाप से बच सकेंगे।

2.3 विषय का सामान्य परिचय

आप इस बात से तो पहले ही परिचित हो चुके हैं कि गीता संवाद प्रणाली या पौराणिक पद्धति का अनुसरण करती है। प्रश्न की प्रकृति पर उत्तर की प्रकृति निर्भर करती है। ज्ञान, भक्ति तथा कर्म तीनों योगों की धारायें स्थान–स्थान पर प्रकट होती है। कई बार पुरावर्तन भी देखने को मिलता हैं। यह बात मोह पर भी लागू होती है। यह सभी अठारह अध्यायों में प्रकट होता है। कभी ज्ञान के सन्दर्भ में तो कभी भक्ति व कभी कर्म के सम्बन्ध में इसकी चर्चा होती है। कभी ज्ञान से मोह का उपाय होता है तो कभी भक्ति से तो कभी कर्मयोग से। अतः मोह के मनोवैज्ञानिक अध्ययन में गीता के सभी 18 अध्यायों का समावेश करना होगा। कोष्ठक में गीता की अध्याय संख्या पहले दी जायेगी तथा श्लोक संख्या उसके बाद देंगे। गीता की मूल पुस्तक को साथ में रखकर आप इस इकाई का अध्ययन करोंगे तो वह अधिक लाभदायक होगा।

आप ध्यान दीजिये कि गीता के पहले अध्याय में अर्जुन को अपने पितामह, अपने गुरू, भाई–बन्धुओं व मित्रों को कुरूक्षेत्र के रण मैदान में उसके साथ युद्ध करने को तैयार देख कर मोह उत्पन्न हुआ। गीता उपदेश के बाद उसका मोहजनित शोक दूर हो यथा तब वह 18वें अध्याय में घोषणा करता है कि "अब मेरा शोक, मोह, सन्देह दूर हो गया है। मेरी स्मृति लौट आई है। मैं अब आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।" (देखें गीता 1.47 तथा 18.73)

गीता उपदेश से अर्जुन का मोह–शोक–सन्देह दूर हुए। उसका विषाद भी प्रसाद (विजय) में बदल गया। आपके जीवन में भी ऐसा परिवर्तन अवश्य आयेगा। श्रद्धा–विश्वास पूर्वक अध्ययन करें तथा उपदेश को स्वयं के जीवन में उतारें। ज्ञान–भक्ति–कर्म तीनों योग जीवन में घटित होंगे।

2.4 मोह का अर्थ

अर्जुन रथ पर सवार होकर कुरूक्षेत्र के रस मैदान में आया तब तक उसको कोई शोक नहीं था। जैसे ही उसने पितामह भीष्म, गुरू द्रोणाचार्य, ताऊ जी के पुत्रों, संगे–सम्बन्धियों, मित्रों के सामने युद्ध के लिए खड़े देखा तो वह मोहग्रस्त हो गया। यहाँ मोह ममत्व का है। ये मेरे अपने हैं। उनके साथ मुझे युद्ध करना पड़े। उनको मारना भी पड़े। उने मरने की आशंका से ही अर्जुन कांप उठा।

दूसरा मोह था, अपने कुलधर्म के नाश का। कुछ स्त्रियों के चारित्रिक पतन से वर्ण शंकरता तथा श्राद्ध कर्म (पिंडदान, तर्पण, श्राद्ध आदि) के अभाव में पितृ दोष उत्पन्न होगा।

देह नश्वर है। इसका नाश होना तो निश्चित है। परन्तु देही (आत्मा) तो अविनाशी है। उसका शोक क्यों? (गीता 1.30 तथा 2.30) देह–देही का अज्ञान अर्जुन के मोह का एक कारण था।

क्षत्रिय का कर्त्तव्य है अर्थ युद्ध करना। क्षत्रिय के लिए धर्मयुद्ध से बढ़कर कोई घोर कर्तव्य (कुल कार्य आदि) नहीं होता (गीता 1.31) क्षत्रिय के कर्त्तव्य के स्थान पर कुल धर्म, रिश्ते में आसक्ति ही मोह के कारण बने।

स्पष्ट है कि अर्जुन ममत्व जनित शोक तथा शोक जनित मोह का शिकार हो गया। देह तथा देही (आत्मा) का अन्तर भूल गया। मोहजनित शोक के कारण ज्ञान विस्मृत हो गया। वह अपने क्षत्रिय के कर्त्तव्य (धर्मयुद्ध) को ही भूल गया। मोह के कारण अज्ञान ने उसे घेर लिया।

आप मोह के मनोविज्ञान को समझने का प्रयत्न करें। अर्जुन को अपने रक्त सम्बन्धियों व मित्रों में ममता (ममत्व या मैं–मेरे का ममत्व) सता रही थी। आपका भी अपना मर जाय तो आप शोक करते हो। शहर में ऐसी भी कई मरते हैं जो आपके आपने नहीं है। क्या उनमें आपका ममत्व होता है? नहीं होता न। इसी कारण उने मरने का आपसे कोई शोक नहीं होता। क्या कारण है? स्पष्टतः ममत्व (ममता) नहीं है तो शोक भी भी नहीं है। उनमें आपको कोई मोह नहीं होता। अतः शोक भी नहीं होता।

अपने संगे सम्बन्धी, जिनको आपका अपना स्वार्थ भी हो, के अनिष्ट (बीमारी, मृत्यु भाव) से ममता व स्वार्थ के कारण मोह ग्रस्त हो आप चिंता व शोक ग्रस्त हो जाते हैं।

वैसे आप अस्पताल जायें तो ऐसे अनेक गंभीर रोगों से ग्रस्त व्यक्ति मिलेंगे। उनमें कोई ममत्व न होने के कारण आप भय, चिंता, शोक पीड़ित नहीं होते। मोह का अभाव होने से ऐसा होता है।

अतः हम कह सकते हैं कि मोह व्यक्ति की एक नकारात्मक मनोदशा है जो उसे शोक व तनाव में धकेल देती है। इसका स्रोत व्यक्ति को ममता व स्वार्थ है। यह अज्ञान के कारण भी होता है। मोह, ममता भी अज्ञान के ही कारण होते हैं। मोहग्रस्त व्यक्ति अपने धर्म/कर्त्तव्य को भी भूल जाता है। गलत निर्णय करता है। जैसे अर्जुन ने मोहवश सन्यास लेने का निर्णय किया।

2.5 मोह के कारण :

मोह उत्पन्न होने के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं–

1. ममत्व या ममता मोह की माँ है।
2. स्वयं का निहित स्वार्थ।
3. नश्वर देह तथा अविनाशी देही (आत्मा)
4. कर्त्तव्य के ज्ञान का अभाव। उच्च स्तर का कर्त्तव्य हो तब नीचे के कर्त्तव्य शून्य हो जाते हैं या उच्च स्तर के कर्त्तव्य में समा जाते हैं।
5. शोक तथा भय भी मोह के सहोदर भाई हैं (गीता 2.1)
6. इन्द्रिय विषयों के चिंतन से उन विषयों में आसक्ति उत्पन्न होती है। आसक्ति से मोह उत्पन्न होता है। इससे कामना व क्रोध उत्पन्न होते हैं। क्रोध से मूढ़ता

उत्पन्न होती है। मूढ़ता से स्मृति भ्रम होता है। स्मृतिभ्रम होने से बुद्धि नष्ट होती है। बुद्धिनाश से व्यक्ति का पतन होता है। अर्थात् वह नीति/धर्म का मार्ग छोड़कर अधर्म के मार्ग पर चल पड़ता है। (गीता 2.62–63)

7. इच्छा तथा द्वेष से उत्पन्न सुख–दुःखादि द्वन्द्व रूपी मोह उत्पन्न होता है। ऐसे द्वन्द्वों के उदाहरण है– सुख–दुःख, लाभ–हानि, जन्म–मृत्यु, जय–पराजय आदि। इस द्वन्द्वों से मोह उत्पन्न होता है। (गीता 7.27)

8. सत्, रज, तम–तीन गुणों वाली प्रकृति भी सारे प्राणियों को मोहित करती है। (गीता0 7.13)

9. संस्कार हीन व्यक्ति (अनार्य) मोहग्रस्त होते है। (गीता 2.2)

10. लोक व परलोक के भोग तथा ऐश्वर्य में आसक्त सकाम बुद्धि भी मोह में पड़ती है। (2.42–44)

11. कामना के निवास स्थान है इन्द्रियाँ, मन तथा बुद्धि, ये अज्ञानी जीव को मोह में डालती हैं। (गीता 3.40)

12. काम ही क्रोध है। बहुत भोग करके भी संतुष्ट नहीं होता। बड़ा देती है। यही बड़ा बैरी है। मोह उत्पन्न करता है। (गीता 3.37)

13. फल की आकांक्षा के मोह से फंसा व्यक्ति अनेक देवताओं को पूजता है। शीघ्र मे सिद्धि मिलती है। (गीता 4.12)

    सकाम भक्त की कामना पूरी न हो तो वह मोह में पड़कर इष्ट देवता भी बदल लेता है। वह मोह वश नास्तिक भी हो जाता है। अशान्त चित्त रहता है। मोहग्रस्त व्यक्ति यह भूल जाता है कि कोई देवी–देवता उसे सुख–दुःख नहीं दे सकते। यह तो उसके कर्मों का ही परिणाम है। प्रारब्ध तो शांति से भोगता होगा। केवल नये पाप–पुण्य उत्पन्न न हों इसके लिए गीता के कर्मयोग के अनुसार अपना कर्त्तव्य करना होगा।

14. सांख्य शास्त्र के कर्म सन्यास तथा गीता के कर्म योग के बीच भ्रम तथा शंका से मोह उत्पन्न होता है। (गीता 5.1) यह मोह अर्जुन को भी हुआ था। जिससे उसने सन्यास लेने का निर्णय किया।

15. परमात्मा हमें सुख–दुःख देते हैं इस अज्ञान के कारण भी व्यक्ति मोह में पड़ जाता है तब उन पर मिथ्या दोष लगता है। (गीता 5.14)

16. बुद्धिहीन व्यक्ति परमात्मा को मनुष्य मानते हैं तथा उनकी लीलाओं को लौकिक कर्म मान कर मोह में पड़े रहते हैं। (नास्तिक हो जाते हैं) (गीता 7.24)

17. तीन गुणों की प्रकृति की माया व्यक्ति की मोह में उलझाये रखती है। (गीता 7. 14) ऐसा मोह वाला व्यक्ति परमात्मा को नहीं जान पाता। (गीता 7.13) माया बड़ी दुस्तर है। यह मोह उत्पन्न करती है। (गीता 7.14)

18. व्यर्थ आशा (पुत्रेषणा, वित्तेषणा, लोकेषणा), व्यर्थ कर्म (इनके पीछे लगे रहने का व्यर्थ कर्म), व्यर्थ ज्ञान (तामसी ज्ञान या अज्ञान को ज्ञान मानना)। ऐसे लोग पागल हो जाते हैं। वे राक्षसी, आसुरी तथा मोहिनी प्रकृति को धारण किये रहते हैं। (गीता 9.12)

19. आसुरी सम्पदा वाले लोग मोहग्रस्त होते हैं। वे बार–बार आसुरी नीचे योनियों में डाले जाते हैं। (गीता 16.8, 16.10–18)

20. अज्ञानी अहंकार व मोहग्रस्त लोग तामसी कठोर तप करते हैं, आत्मा–परमात्मा को कष्ट देते हैं। (गीता 18.5)

21. मोहवश स्वधर्म (अपने कर्त्तव्य) का त्याग करता है। परन्तु अपनी प्रकृति के गुणों के रक्षव वश हो वही कर्म फिर करना पड़ता है। (गीता 18.60)

तापसी सुख (18.39), तामसी बुद्धि (18.32), तामसी धारणा (18.35), तथ तामसी सुख (18.39) भी मोह के कारण हैं।

आत्मा को कर्त्ता मानने वाला भी मोहग्रस्त है। (गीता 18.16)

उपरोक्त 21 बिन्दुओं से आपको मोह किन कारणों से उत्पन्न होता है यह स्पष्ट समझ में आ जायेगा।

2.6 मोह के परिणाम :

मोह तथा अज्ञान का परिणाम एक दुधारी तलवार की तरह है। अज्ञान मोह का कारण है तो उसका परिणाम भी है। मोह के कारण भी अज्ञान बढ़ता है। मोहग्रस्त व्यक्ति को इस बात का ज्ञान नहीं होता कि शरीर तथा शरीरी (आत्मा) के बीच क्या भेद है। शरीर तथा उसके सम्बन्धी दोनों को वह सत्य तथा शाश्वत समझ बैठता है। शरीर की भौतिक सुख–सुविधाओं, उसके पालन–पोषण को वह मानव जीवन का परम पुरुषार्थ मान लेता है। उन्हीं में वह क्षणिक सुख ढूँढ़ता है जो मृगजल के समान छलावा सिद्ध होता है। कुछ क्षणिक सुख दुःख में बदल जायेगा।

इसकी वह अनदेखी करता है। येन–केन–प्रकारेण वित्तेषणा पूरी करने में अधर्म मार्ग से अर्थ अर्जित करता है। जो जीवन में अनर्थ सिद्ध होता है। अपने साधनों की सीमा से अधिक कामनायें बढ़ाकर इन्द्रिय विषयों के सुख भोगने की लालसा में अमर्यादित उपयोग करता है। योग से भोगों की कामना की आग और तेजी से सुलगने लगती है। ऋण लेकर कामनापूर्ति करता है। ऋण की किस्तें चुकाने की चिंता में अधर्म से धन कमाने लगता है। शरीर अनेक प्राण घातक बिमारियों का खजाना बन जाता है। अमर्यादित भोग से भी रोग उत्पन्न होते हैं। चिकित्सा व्यय भार तथा मृत्यु की आशंका जीवन को नरक बना देती है।

मनुष्य यह भूल जाता है कि सभी सुख संसार के भोगों में नहीं मिलता है। वह तो आत्मा का गुण है। आनन्द की अनुभूति तो भीतर की यात्रा करने पर ही मिलती है।

अमर्यादित भोग की संस्कृति (विकृति) ने प्रकृति का शोषण व विनाश करके इस विश्व के अस्तित्व को ही संकट में डाल दिया है। विषय प्राकृतिक परिवर्तन ने पूरी मानव जाति को ही विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। अतितापमान से बर्फ गलकर समुद्र में जल स्तर को बढ़ा दिया। इससे समुद्र तट पर बसे हुए नगरों के डूबने का संकट उत्पन्न हो रहा है। ईसान, पशु–पक्षियों तथा प्रकृति का विनाश अति गर्मी व अति शीत, बाढ़ व जल के अभाव से होगा।

वह परिवार तथा सम्बन्धियों, मित्रों आदि को संतुष्ट करने में पूरा जीवन गुजार देता है तो भी उसे अनेक प्रकार की अशांति ही उनसे मिलती है।

सच्चा ज्ञान यही है कि शरीर तथा उसके सम्बन्ध सब नाशवान् हैं। सभी प्रकार के द्वन्द्व बुद्धि को अस्थिर कर देते है। समता बुद्धि के बिना बुद्धि भ्रम व मोह में फंस जाता है। संकल्प–विकल्प में उलझा रहता है। भक्ति करने या कर्त्तव्य पालन करने में मन, बुद्धि उसाक साथ नहीं देते।

अनेक इन्द्रिय विषय–योगों की कामनाओं की आसक्ति व्यक्ति को अत्यन्त क्रोधी तथा असंतुष्ट बना देती है। पाप कर्म करने से उसका पतन होता है। न भक्ति होती है न कर्त्तव्य पालन हो पाता है।

मोहग्रस्त व्यक्ति के दैवी सम्पदा गुण (शील, सन्तोष, सदाचार, अहिंसा, समय, रागद्वेष रहित, अचौर्य, पवित्रता आदि) नष्ट हो आसुरी सम्पदा (कामनायें, क्रोध, लोभ, राग–द्वेष, अहंकार, मयता आदि) बढ़ जाती है। आसुरी सम्पदा उसे नरक में ले जाती है तथा भिन्न तिर्यग योनियों में पुनः–पुनः जन्म लेने का दुःख भुगतने को बाध्य करती है। काम–क्रोध व लोभ तो नरक के तीन दरवाजे हैं। ये मोहग्रस्त व्यक्ति को नरक में दुःख पाने को धकेल देते हैं।

मोहग्रस्त व्यक्ति नास्तिक हो जाता है। वह भगवन को भी एक जन्मने–मरने वाला मनुष्य ही मानता है। वह भक्ति के अमृत से वंचित रहता है। अनेक दुःख भोगने के लिए नरक वास तथा पुनर्जन्म के दुःखों में वह बार–बार पड़ता रहता है।

मोहग्रस्त व्यक्ति कर्मयोगी नहीं हो सकता। कर्त्ताभाव से अहंकार से ग्रस्त रहता है। कर्त्तव्य के गुण–दोषों के विवेचन में उलझा रहता है। अपने स्वकार्य की तुलना दूसरों के स्वधर्म से करके भ्रम में पड़ा रहता है। कर्म फल की आशा में मन उलझा रहता है जिससे वह अपना कर्त्तव्य पूरा चित्त लगाकर नहीं कर पाता। कामचोर व भगोड़े के रूप में उसकी निंदा होती है। असफलता की आशंका में उसकी बुद्धि अस्थिर हो जाती है।

कुल मिला कर आप यह समझें कि मोहग्रस्त व्यक्ति ज्ञान योग, भक्तियोग व कर्मयोग तीनों से ही वंचित रहकर जीवन को व्यर्थ कर देता है। जीवन के चार पुरुषार्थों (धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष) में से एक भी पुरुषार्थ सिद्ध नहीं हो पाता। अनमोल मानव जीवन प्राप्त कर उसे व्यर्थ खो देता है।

प्रकृति के तीन गुणों– सतोगुण, रजोगुण तथा तमोगुण भी मनुष्य को बंधन में डालते हैं। सतोगुण ज्ञान व शांति देता है जो मोहग्रस्त को प्राप्त नहीं हो पाता। रजोगुण उसे कर्म के बंधन में बांधकर ईर्ष्या–द्वेष, अहंकार, प्रतिस्पर्धा जन्म तनाव, चिंता आदि में बांधता है। तमोगुण अज्ञान, मोह, भ्रम, निद्रा, आलस्य, प्रमाद, दीर्घसूत्रता के बंधन में डाल देता है। तमोगुण से रजोगुण तथा रजोगुण से सतोयुग श्रेष्ठ होता है। परन्तु तीनों ही आसक्ति व मोह, अहंकार से बंधनों में तो बांधते ही हैं। तीनों गुणों वाली प्रकृति भी ज्ञान योग, भक्ति योग तथा कर्मयोग में बांधा उत्पन्न करती है।

तुलसीदास ने रामचरित मानस में ठीक ही कहा है, ''मोह सकल व्याधिष्ट कर मूला।'' मोह ही समस्त रोगों/समस्याओं की जड़ है।

2.7 मोह दूर करने के उपाय :

आप यह पुनः याद करें कि अर्जुन मोह जनित शोक का शिकार हो विषादमुक्त हो गया था। युद्ध करने के बजाय सन्यास लेकर भीख मांग कर खाने का निर्णय कर रहा

था। पूरा गीता उपदेश श्रीकृष्ण ने उसको मोह दूर कर ज्ञान, भक्ति व कर्मयोग में लगाने के लिए ही दिया था। उसके विषाद को विजय में बदल दिया था।

आप स्वयं को अर्जुन के स्थान पर रखो। अपने मोह के स्वरूप तथा कारणों को सूचीबद्ध कर लो। अब श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को उपदेशित मोह दूर करने के मनोवैज्ञानिक उपायों को ग्रहण करने के लिए सावधानीपूर्वक तैयार हो जाइये।

गीता के प्रथम अध्याय में श्रीकृष्ण ने अर्जुन का मोह दूर करने के लिए दो उपाय स्पष्ट बतालये– ''देह नश्वर है परन्तु देही (आत्मा) अविनाशी है। अतः तूं शोक मत कर।'' (गीता 1.30)

जब शोक नहीं रहेगा तो शोक के कारण उत्पन्न मोह भी दूर हो जायेगा।

''क्षत्रिय व कर्त्तव्य ही युद्ध करता है। तूं युद्ध करने से डरता क्यों हैं? क्षत्रिय के लिए धर्मयुद्ध से बढ़कर कोई कर्त्तव्य नहीं है।'' (गीता 1.31)

धर्मयुद्ध करना क्षत्रिय का स्वधर्म है। सन्यासतो परधर्म है। परिवार के लोगों, सम्बन्धियों, मित्रों की जीवन रक्षा तथा कुरूधर्म ये सब क्षत्रिय के स्वधर्म का विरोध नहीं कर सकते। युद्ध जब क्षत्रिय के कर्त्तव्य का भाग है, तो उसमें हिंसा को हिंसा नहीं कह सकते। ऐसे अन्य उदाहरणों पर भी आप ध्यान देकर इस बात को समझें–

1. एक सत्र न्यायाधीश हत्या का आरोप सिद्ध होने पर अपराधी को मृत्यु दंड देता है तो यह उसका कर्त्तव्य है। उसे हिंसा का पाप नहीं लग सकता।
2. पुलिस कानून व्यवस्था बनाये रखने के लिए जल प्रयोग करें या सीमा पर तैनात, सैनिक आक्रमण कारी या आतंकवादी पर गोली चला मार देता है तो यह कर्त्तव्य पालन होने के कारण पुलिस व सेना को हिंसा का पान नहीं लगेगा।
3. यदि एक शिक्षक किसी सत्र की परीक्षा कॉपी जांचता है तथा उसका उत्तर ठीक न होने पर उसे फेल कर देता है तो वह अपना कर्त्तव्य पालन कर रहा है। छात्र यदि आत्म हत्या भी कर ले तो भी शिक्षक को कोई दंड नहीं दिया जा सकता। उसको हिंसा का अपराधी नहीं कर सकते।

गीता के अध्याय 2 में आत्म ज्ञान को ही विस्तार से समझाया गया है। आत्मज्ञान का उद्देश्य अर्जुन के मोह को दूर करना ही है। संजय ने कहा, ''मोह, शोक तथा भाव से ग्रस्त व्यक्ति करूणा से व्याप्त हो जाता है। उसकी आंखों में आंसू भर आते हैं तथा नेत्रों से व्याकुलता प्रकट होती है।'' (गीता 2.1)

श्रीकृष्ण ने अर्जुन की कायरता, नपुसंकता तथा हृदय की दुर्बलता की कड़े शब्दों में निंदा की। उसे ज्ञानोपदेश देते हुए वे बोले– ''किसी भी काल में हम नहीं थे या नहीं होंगे ऐसा नहीं है, (212) जन्म–मृत्यु–पुनर्जन्म का चक्र क्रमशः चलता रहता है। शोक किसता तथा क्यों? (2.16) जैसे जीवात्मा बचपन, युवावस्था तथा रोग व वृद्धावस्था देखता है वैसे ही मृत्यु को देखें कि इसके बाद नया शरीर मिलेगा। शरीर नश्वर तथा परिवर्तनशील है। नाशवान् शरीर में मोह क्यों? मृत्यु का भय क्यों? (2.13) हम जैसे पुराने वस्त्र बदलकर नये वस्त्र धारण करते हैं वैसे ही आत्मा पुराना शरीर त्याग कर नया शरीर बदलती है। इसमें मोह शोक क्यों? (2.22) अविनाशी आत्मा तो सर्वव्यापक है। उसका विनाश कोई नहीं कर सकता। (2.17)

मोह रात्रि में योगी जागता है। (मोह से सावधान रहता है।) नश्वर सुख प्राप्ति रूपी दिन में मोहग्रस्त संसारी लोग जागते हैं। उस समय योगी सोता है। (2.64)

सर्दी–गर्मी, सुख–दुःख, उत्पत्ति–विनाश सब द्वन्द्व अनित्य (नाशवान्) हैं। वे स्थायी नहीं होते। इनको सहन करो। (2.14)

आत्मा का एक आश्चर्य की भांति ज्ञानी लोग वर्णन करते हैं, सुनने वाले आश्चर्य की भांति सुनते हैं। इसे मोह के कारण समझ कम लोग पाते हैं। (2.29)

इस मोह को दूर करने के लिए आत्मा का ज्ञान आवश्यक है। अधिकारी, आत्मज्ञानी के पास अधिकारी श्रोता दीर्घकाल तक सत्संग करे। श्रद्धा, विश्वास रखे। तभी मोह आत्माज्ञान से दूर होगा।

वैदिक सकाम यज्ञ–तप, दान में लगी बुद्धि लोक–परलोक के भोगों में आसक्त रहती है। ऐसी बुद्धि परमात्मा का निश्चय नहीं करने देती। सकाम कर्म बुद्धि को निष्काम बनाओं तभी मोह दूर होगा। (2.42–44)

ज्ञानयोग के उपाय बतलाने के बाद श्रीकृष्ण कर्मयोग के उपाय बतलाते हैं। वे कहते हैं, ''सिद्धि–असिद्धि (जय–पराजय) में समता बुद्धि एवं कर्मयोगी बन अपना कर्त्तव्य पालन करो। इसी को समत्व बुद्धियोग कहते है। ऐसा व्यक्ति स्थितप्रज्ञ कहलाता है।'' (गीता 2.48) बुद्धियोगी कर्मफल को त्याग कर मोक्ष पा लेता है। (2.51) व मोह रूपी दलदल को पार करके लोक–परलोक के भोगों से विरक्त हो जायेगा। (2.52) ज्ञान योग तथा कर्मयोग दोनों ही मोह जनित कर्म बन्धन (पाप–पुण्य) को मिटा देते हैं। (2.39)

गीता के तीसरे अध्याय के प्रारंभ में अर्जुन एक प्रश्न करता है, ''आप यदि ज्ञान को श्रेष्ठ मानते हैं हो मुझे युद्ध जैसे भयंकर कर्म में क्यों लगाते हो? कर्म सन्यास लेने दीजिये मुझे।'' (गीता 3.1)

श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया, ''कर्म किये बिना कोई भी प्राणी एक क्षण भी नहीं रह सकता। सभी मनुष्य सत, रज, तम वाली प्रकृति के वशीभूत हो कर्म करने के लिए बाध्य किये जाते हैं।'' (गीता 3.5) जो मूढ़ बुद्धि मनुष्य समस्त इन्द्रियों को हठपूर्वक ऊपर से रोक कर मन में उनके विषयों का चिंतन करता है वह मिथ्याचारी या दंभी कहलाता है।'' (गीता 3.6) अज्ञानी व्यक्ति स्वयं को कर्त्ता मानता है। वास्तव में कर्म हो प्रकृति के तीन गुण करते हैं। (गीता 3.27) यदि कर्त्तापन के अहंकार से मोहित व्यक्ति को यह ज्ञान हो जाय तो वह अहंकार जनित मोह से युक्त हो जायेगा।

''परमात्मा में चित्त लगा कर सब कर्म उनको समर्पित कर दो। आशा, ममता, संताप रहित होकर अपना कर्त्तव्य करो।'' (गीता 3.30)

फलाशा, ममता–मोह तथा संताप तो कर्त्तव्य पालन में बांधा डालते हैं। इनका त्याग करने पर ही कर्त्तव्य पालन कर सकते हों। यह त्याग व्यक्ति स्वयं निर्णय करके करें।

श्रीकृष्ण ज्ञानियों को एक चेतावनी देते हैं। आप ज्ञान, (कर्म सन्यास) तथा कर्मयोगी का ज्ञान रूप ज्ञानियों को देकर उनका चित्त फलासक्ति वाले कर्म से भी हटाओ मत। वे जैसे भी कार्य कर्म कर रहे हैं उनको करने दो। उनकी बुद्धि मं कर्म के प्रति भ्रम पैदा मत करो। (गीता 3.29) वे एक ओर चेतावनी देते हुए बोले, ''जो कर्म के बारे में

मेरी आज्ञा (कर्मयोग) का पालन नहीं करेंगे वे अनेक प्रकार के ज्ञानों में मोहित हो नष्ट हो जायेंगे। (गीता 3.32)

वे मन, बुद्धि, इन्द्रियों के निग्रह द्वारा कामना जैसे वैरी को जीतने की सलाह देते हैं। (3.37 तथा 3.40) कामनाओं की सलाह देते है। (3.37 तथा 3.40)। कामनाओं को जीतने वाला भी मोह से मुक्त हो जाता है। सकाम कर्म बन्धन व मोह उत्पन्न करता है।

गीता के अध्याय 4 में श्रीकृष्ण अर्जुन को गीतरागी, भय रहित व क्रोध रहित हो परमात्मा में स्थित तप से पवित्र हो मोक्ष पाने की सलाह देते हैं। (गीता 4.10) ऐसे जनकादि अनेक राज ऋषियों के उदाहरण देते हुए अपनी बात की पुष्टि करते हैं। मोक्ष प्राप्त करने वाले ऐसे कर्मयोगी मोह से मुक्त हो जाते हैं। वे पुनः कहते हैं, ''संयमी, निष्काम, फलाशा रहित कर्म करने वाला कर्मयोगी पाप को (मोह को) प्राप्त नहीं होता।'' (4.22) समता बुद्धि वाला कर्म से नहीं बंधता– पाप–पुण्य उसे स्पर्श नहीं करते। (4.22) ब्रह्मार्पण यज्ञ–जिसमें स्त्रुणा, अग्नि सामग्री की आहुति, घृत, मंत्र, यज्ञ कर्त्ता तथा यज्ञ, फल सभी ब्रह्म हैं। (4.24) उसमें मोह का कोई स्थान नहीं होता। यही बात देवपूजन यज्ञ, आत्मा का आत्मा में मन, प्राणों में प्राण की आहुति (प्राणायाम यज्ञ), इन्द्रिय संयम यज्ञ, आत्मा संयम यज्ञ, आत्म संयम यज्ञ, द्रव्य यज्ञ, खान यज्ञ, जप यज्ञ आदि भी मोह नष्ट करने के उपाय हैं। ज्ञान यज्ञ रूपी यज्ञों में श्रेष्ठ है जो मोह रूपी अज्ञान को भस्म कर देता है। सभी कर्म ज्ञान में समस्त हो जाते हैं। (4.24–33)

सत्संग से ज्ञान प्राप्त करने व अज्ञान, ममता मोह को नष्ट करने के लिए तत्वदर्शी ज्ञानियों के पास जाओ। दंडवत प्रणाम करो। सेवा करो/निष्काम प्रश्न करो। तत्वज्ञानी का उत्तर ध्यान से सुनो। उनके निर्देश का जीवन में पालन करो। (4.34) इस ज्ञान को पा तूं मोह से मुक्त हो जायेगा (4.35) तूं पापियों का शिरोमणी भी हो तो भी मोह रूपी पाप सागर से पार हो जायेगा। (4.36) ज्ञानाग्नि में सब कर्म (मोहादि) जलकर भस्म हो जायेंगे। (4.37) ज्ञान के समान पवित्र करने वाला संसार में और कुछ नहीं है। शुद्ध अन्तःकरण वाला व्यक्ति इसे अपनी आत्मा में ही पा लेता है। (4.38) श्रद्धावान, जितेन्द्रिय तथा साधन परायण मनुष्य ही ज्ञान पाता है तथा तुरन्त परम शांति को प्राप्त कर लेता है। (4.39)

संशय युक्त, अविवेकी तथा अश्रद्धा वाला (मोह युक्त) प्राणी अवश्य नष्ट हो जाता है। वह लोक–परलोक दोनों में दुःख पाता है। (4.40)

अज्ञान जनित संशय को ज्ञान की तलवार से काट कर समत्व बुद्धि युक्त हो अपना कर्त्तव्य कर। (4.42) इस प्रकार ज्ञान से मोह को नष्ट करें।

इस ज्ञान को पाने के बाद तूं मोह को प्राप्त नहीं होगा। पहले सब भूतों को आत्म रूप देखेगा तथा फिर उनके परमात्मा में देखेगा। (4.35)

अध्याय 5 के प्रारंभ में अर्जुन कर्म सन्यास तथा कर्मयोग में से कोई श्रेष्ठ मार्ग बताने की प्रार्थना श्रीकृष्ण से करता है। श्रीकृष्ण कर्मयोग को कर्म सन्यास से श्रेष्ठ बतलाते हैं जो पालन करने में अपेक्षा कृत सुगम है। (गीता 5.2)

सांख्य योगी (कर्म सन्यासी) ज्ञानी है। ममता मोह मुक्त है। न तो कर्म करता है न किसी से कर्म करवाता है। वही सभी कमों की त्याग कर परमात्मा के स्वरूप में स्थित हो जाता है। (5.13) श्रीकृष्ण परमात्मा का उदाहरण देकर समझाते हैं, ''परमात्माा स्वयं

भी किसी के कर्त्तापन, कर्म व कर्मफल के संयोग की रचना नहीं करते हैं। प्रकृति (स्वभाव) ही सब रचना करता है। (5.14)

समता भाव में जीने वाला जगत को जीत लेता है। परमात्मा स्वयं भी समता युक्त तथा दोष रहित (ममता, मोह रहित) है। ऐसा व्यक्ति भी परमात्मा में स्थित होता है। (5.18)

जो प्रिय को पाकर हर्षित न हो तथा अप्रिय को पाकर खेद न करे व स्थिर, बुद्धि, संशय रहित व्यक्ति परमात्मा में एकीभाव से नित्य स्थित है। (गीता 5.20)

आप प्रिय–अप्रिय को ध्यान देकर समझें– प्रिया क्या है? हम जो पसंद करते हैं वह होना तथा जो हम पसंद नहीं करते उससे निवृत्ति। सुख पाना व दुःख/भय का निवृत होना प्रिय है। अप्रिय क्या है? हम जो पसंद नहीं करते वह होना या जो सुख है वह दुःख में बदल जाय। हमें स्वयं के साथ ही प्रिय जनों के लिए भी ऐसा ही चाहते हैं। सुख प्रिय है, दुःख अप्रिय है।

कर्मयोगी कर्मफल का त्याग करके भगवत् प्राप्ति रूप शांति को प्राप्त होता है। वह फल के मोह, भय आदि बंधनों से मुक्त रहता है। सकाम कर्त्ता फल के मोह, भय आदि में आसक्त हो बंधन में बंधा रहता है। (5.12)

ज्ञान व समता बुद्धि वाल व्यक्ति भक्ति योग का अधिकारी हो जाता है। भक्त तो भगवान को ही सब यज्ञ व कर्मों का भोक्ता मानता है, सम्पूर्ण लोकों का स्वामी मानता है, सब भूतों का सुहृद मानता है, निःस्वार्थ प्रेमी तथा दयालु मानता है। वह ऐसा तत्त्व से जानकर शांति को प्राप्त कर लेता है। (5.29)

''जिसके सब पाप (मोह, शोक) नष्ट हो गये, संशय ज्ञान से कट गये, जो सब प्राणियों के हित में रत है, जिसका मन जीता हुआ परमात्मा में स्थिर है ऐसा ब्रह्मवेत्ता पुरुष शांति (ब्रह्म) को प्राप्त होता है। (गीता 5.25)

''इन्द्रिय विषय क्षणिक सुख देते हैं परन्तु वे दुःख के ही हेतु है। वे नाशवान हैं। अतः बुद्धियोगी इनमं रमण नहीं करता।'' (आसक्ति जनित मोह से बचा रहता है।) (5.22)

ज्ञान का प्रकाश परमात्मा को प्रकाशित कर देता है। तब शोक, मोह का कोई अवकाश नहीं रहता। (गीता 5.16)

इस प्रकार पांचवा अध्याय ज्ञान, कर्म, भक्ति का मिश्रण प्रस्तुत करता है।

अध्याय 6 में बतलाया गया है कि निष्काम कर्म से ही व्यक्ति योगी बनता है। यह संकल्प रहित हो मोक्ष पा लेता है। (6.3) योगी सब भूतों को आत्मवत् देखता है। वह सुख–दुःख में साथ रहता है। यह परम श्रेष्ठ (मोह रहित) होता है। (6.32)

भक्ति योग के द्वारा भी एक व्यक्ति माया, मोह, शोक आदि से युक्त हो भगवान् को सर्व प्रकार से भजता है। (गीता 7.28)

त्रिगुणात्मक माया दुस्तर है। भक्त ही इसे पार करते हैं। (गीता 7.14) भक्ति चाहे निराकार ब्रह्म की जाय या साकार ईश्वर की की जाय या विश्वरूप या विराटरूप की की जाय पृथक–पृथक भाव से तो भी व्यक्ति माया–मोह से छूट जाता है। (गीता 9. 15, 9.18)

''जो मुझे अजन्मा, अनादि तथा लोकों का महान ईश्वर तत्त्व से जानता है वह ज्ञानी सभी पापों (माया, मोह, शोक आदि) से मुक्त हो जाता है।'' (10.3)

माया, मोह, शोक आदि विकारों का कारण है अज्ञान। यह गोपनीय अध्यात्म ज्ञान के उपदेश से दूर होते ही अर्जुन दिव्य दृष्टि पाने योग्य हो गया। तभी उसे भगवान् के विश्व रूप का दर्शन करने की योग्यता प्राप्त हुई। (गीता 11.1)

भक्त के गुणों का वर्णन गीता अध्याय 12 में हुआ है। एक भक्त शोक नहीं करता। (गीता 12.17) भक्त आसक्ति व कामना से भी मुक्त होता है। समबुद्धि होता है। (गीता 12.18–19)

क्षेत्र–क्षेत्रज्ञ के तत्त्व को जानने वाला ज्ञानी होता है। वह भी शोक, मोहादि विकारों से मुक्त हो जाता है। (गीता 13.1)

त्रिगुणातीत व्यक्ति भी सब सुखों से मुक्त हुआ परमानन्द को प्राप्त होता है। (गीता 14. 20)

गीता अध्याय 15 में वर्णित क्षर, अक्षर, पुरुषोत्तम योग भी ज्ञान देता है। (गीता 15.20) वह पुरूषोत्तम का भजन करने में लग जाता है। (15.19), ज्ञान, मोह, आसक्ति को वह जीत लेता है। (15.5)

अहं, ममता व वासना रूप अति दृढ़ जड़ों वाले संसार रूप पीपल के वृक्ष को दृढ़ वैराग्य रूपी शस्त्र द्वारा काटो। तभी ज्ञान, भक्ति व कर्मयोग की योग्यता प्राप्त होती है। (15. 2, 3)

अध्याय 16 में आसुरी सम्पदा वाले लोगों में मोहादि का लक्षण बतलाया गया है। दैवी सम्पदा वालों में इसका अभाव होता है। (गीता अध्याय 16 श्लोक 8, 10–18)

मोह वश अपने कर्त्तव्य को त्यागने वाला भी प्रकृति वश वही कर्म करता है। (18.60) आत्मा को कर्त्ता समझने वाला अज्ञानी है। (18.16) श्रद्धा–विश्वासपूर्वक मन लगाकर गीता ज्ञान श्रवण करने से मोहादि का नाश होता है जैसा अर्जुन ने स्वीकार किया। (18.73) सबसे श्रेष्ठ उपाय मोहादि से मुक्त होने का है प्रभु शरणागति। (गीता 18, 66)

आपको यह तो स्पष्ट हो गया होगा कि मोह से मुक्ति पानी के लिए ज्ञान, भक्ति तथा कर्मयोग तीन मार्ग उपलब्ध है। आपका बुद्धितत्व या बौद्धिकता प्रधान व्यक्तित्व हो तथा तर्क शक्ति बढ़ी हुई हो तो आप ज्ञान मार्ग को चुनो। यदि आप भावनात्मक व्यक्तितव वाले हों तो भक्ति मार्ग को चुनो। यदि आप कर्म या रजोगुण प्रभाव हों तो कर्म मार्ग को चुनो। सर्वरेष्ठ है प्रभु की शरण लेकर उनकी आज्ञानुसार कर्त्तव्य कर परिणाम उनको ही समर्पित करने का। शरणागत कर्मयोगी का सब दायित्व परमात्मा वहन करते हैं जैसे श्रीकृष्ण ने अर्जुन को विजयी बनाने का दायित्व स्वयं वहन किया। मोहादि बन्धन उनकी कृपा से कट गये, सभी कठिनाइयों के हल भी श्रीकृष्ण से निकलाते हुए अर्जुन को विजय के लक्ष्य तक पहुँचा दिया।

2.8 सारांश

मोह की उत्पत्ति कारण माया (मैं–मेरा) की आसक्ति (ममता या ममत्व) तथा निजी स्वार्थ है। मोह से मुक्ति पोन के उपाय हैं ज्ञान मार्ग, भक्ति मार्ग तथा कर्त्तव्य तथा कर्त्तव्य मार्ग। प्रत्येक उपाय सब के लिए उपयोगी नहीं है। प्रधान मनोदशा वाले व्यक्ति

के लिए ज्ञान योग उयुक्त है। भाव प्रधान मनोदशा वाले के लिए भक्ति योग उपयुक्त उपाय है। रजोगुणी कर्म प्रधान व्यक्ति के लिए कर्मयोग उपयुक्त उपाय है। सभी मार्गों का लक्ष्य मोक्ष ही है। ज्ञान योग तथा भक्तियोग कर्मयोगी बनने के लिए व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार करते हैं। सर्वश्रेष्ठ उपाय है प्रभु की शरण लेना।

2.9 पारिभाषिक शब्दावली

मोह, ममता, शोक, ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग, शरणागति, गुणातीत, तीन गुणों वाली प्रकृति, क्षर–अक्षर, पुरुषोत्तम, कर्म सन्यास, कर्मफल सन्यास।

2.10 संदर्भ ग्रंथ :

1. जयदयाल गोयन्दका : श्रीमद्भगवद्गीता, तत्व विवेचनी हिन्दी टीका, गीता प्रेस, गोरखपुर (सं0 2067)

2. ए0सी0 भक्ति वेदान्त स्वामी प्रभुपाद : भगवद्गीता, यथारूप, इस्कॉन, जुहू, मुंबई, 2010

3. भारतीय प्रबन्धन गुरु श्रीकृष्ण, मीसा (फ्रेंडस), दिल्ली, 2023

4. Shrimad Bhagwadgita for Transformation of Pesonality of Youth, Himalaya, Mumbai, 2024.

5. Khandelwal N. : Strem Management, Himalaya, Mumbai, 2014.

2.11 बोध प्रश्न :

1. मोह का मनोविज्ञान स्पष्ट करें।

2. मोह का अर्थ बतलायें। मोह के कारण तथा उसके परिणामों का वर्णन करें। अर्जुन विषाद के प्रकरण के आधार पर अपना उत्तर दीजिये।

3. मोह से मुक्ति पाने के मनोवैज्ञानिक उपायों का वर्णन करें। कौन सा उपाय किस प्रकार की मनोदशा वाले लोगों के लिए उपयोगी है?

4. मोह का सम्बन्ध निम्नलिखित घटकों से क्या है

इकाई 3 समता और ज्ञान

इकाई का परिचय

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 विषय का सामान्य परिचय

3.4 समता तथा ज्ञान का अर्थ

3.5 समता तथा ज्ञान के बीच अन्तर

3.6 समता तथा ज्ञान के बीच सम्बन्ध

3.7 समता में ज्ञान की आवश्यकता/महत्त्व

3.8 समता तथा ज्ञान के परिणाम

3.9 समता तथा ज्ञान के अभाव के दुष्परिणाम

3.10 मन तथा ज्ञान की सीमायें

3.11 सारांश

3.12 पारिभाषिक शब्दावली

3.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.14 बोध प्रश्न

3.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको :

1. समता का सम्बन्ध बुद्धि योग या समत्व बुद्धि से है, कर्म सन्यास लेने से नहीं।
2. समता बुद्धि वाले स्थित प्रज्ञ व्यक्ति के विशिष्ट लक्षण हैं।
3. समता बुद्धि ज्ञान, योग, भक्ति योग व कर्म योग तीनों में होना आवश्यक है।
4. समता के अभाव में न भक्ति हो सकती है न कर्मयोग हो सकता है।
5. समता बिना सांख्य शैली का सन्यास भी भ्रष्ट हो जाता है।

3.2 प्रस्तावना

इस संसार में अनेक प्रकार के द्वन्द्व हैं। अर्जुन का द्वन्द्व था युद्ध करूँ या नहीं करूँ? युद्ध का परिणाम क्या होगा– जय होगी या पराजय? युद्ध करूँ तो मेरे कुलधर्म का नाश होगा, नहीं करूँ तो कायर, नपुसंक कहलाऊँगा? कौन मारेगा, कौन मरेगा?

इसी प्रकार के अनेक द्वन्द्व आपके जीवन में भी आपके सामने उपस्थित होते है। यथा– सुख–दुःख, हानि–लाभ, सफलता–असफलता, जन्म–मृत्यु आदि। इन द्वन्द्वों में

कंसा व्यक्ति अनिर्णय का शिकार हो जाता है। बुद्धि अस्थिर हो जाती है। उसकी स्थिति ऐसी होती है– रास्ता सूझे ना। जाऊँ कहाँ? चोराहे पर खड़ा सोचता रहता है कि किधर जाऊँ? सीधा जाऊँ, पीछे लौटूँ, दांये मुड़ जाऊँ या बांये मुड़ जाऊँ? इसी उधेड़ बुन में अकस्मात का शिकार भी हो जाता है। लक्ष्य से भटक जाता? जीवन ही एक जटिल पहेली बन जाता है। अंत में न माया मिली न नाम वाली स्थिति हो जाती है।

3.3 विषय का सामान्य परिचय :

बुद्धि की अस्थिरता व मन की चंचलता यह हम सबकी एक दैनिक जीवन की समस्या है। गीता इस समस्या से ग्रस्त अर्जुन की दयनीय दशा–मोह, शोक, विषाद युद्ध एक महारथी जो स्वजनों के मरने के भय से पसीने में नहाकर युद्ध नहीं करने की सोच लेता है। विषाद ग्रस्त हो रथ में नीचे बैठ जाता है। (गीता 1.47)

अर्जुन की विषादयुक्त दशा देखकर श्रीकृष्ण कठोर शब्दों में उसे डांटते हैं। वह उनको गुरु बना लेता है। उनकी शरण ले लेता है तथा उसे जो कर्त्तव्य के बारे में भ्रय हुआ उसे दूर करने के लिए उचित मार्गदर्शन देने की प्रार्थना करता है। (गीता 2.7) गीता ज्ञान का उपदेश संवाद प्रणाली या पौराणिक पद्धति में आगे बढ़ता है। 700 श्लोकों में 18 अध्यायों में यह संवाद चलता है। अंत में अर्जुन का शोक, मोह, संशय दूर होता है। वह अपना कर्त्तव्य करके विजय प्राप्त करता है।

आप स्वयं को अर्जुन मानें। अपने कर्त्तव्य के बारे में जो द्वन्द्व अनेक बार आपके सामने आते हैं उनकी सूची बना लीजिये। गीता के विश्वगुरु श्रीकृष्ण से मार्गदर्शन लेने को तैयार हो जाइए।

3.4 समता तथा ज्ञान का अर्थ :

समता बुद्धि की वह स्थिति है जब वह द्वन्द्व रहित हो स्थिर हो जाती है। स्थिर बुद्धि को बुद्धियोग कहा गया है तथा ऐसे व्यक्ति को स्थितप्रज्ञ कहते हैं। स्थिर बुद्धि या समता बुद्धि वाले पुरुष के निम्नलिखित लक्षण होते हैं –

1. सभी कामनाओं का त्याग करके आत्मा से आत्मा में संतुष्ट होता है। (गीता 2.55)
2. दुःख प्राप्त हो तो मन में उद्वेग नहीं होता।

   सुख प्राप्त होने पर उससे प्रभावित नहीं होता।

   दोनों स्थितियों में सम बुद्धि रहता है।

   राग, भय, क्रोध से युक्त रहता है। (गीता 2.56)

   स्थिर बुद्धि व्यक्ति जैसी भी परिस्थिति हो उसे स्वीकार करता है। भगवान की राजी में राजी रहता है। मिले वह हरिकृपा तथा न मिले तो हरि इच्छा। ऐसी उत्तम मनोदशा में जीवन जीता है।
3. राग–द्वेष से मुक्त रहता है। (गीता 2.57)
4. इन्द्रियों के विषयों से इन्द्रियों को खींच लेता है।

5. परमात्मा का साक्षात्कार करके इन्द्रिय विषयों के साथ उनमें अनासक्त भी हो जाता है। (गीता 2.59)

आपने स्थितप्रज्ञ का अर्थ तथा उसके लक्षण समझ लिये हैं। अब आप ज्ञान का अर्थ ज्ञानी के लक्षण समझें।

परमात्मा के तत्त्व ज्ञान को ज्ञान कहते हैं। जैसे सूर्य के प्रकाश से अंधेरा दूर हो जाता है वैसे ही ज्ञान के प्रकाश से अज्ञान दूर हो परमात्मा का आनन्द स्वरूप प्रकाशित हो जाता है। (गीता 5.16)

परमात्मा का तत्त्व ज्ञान विद्या का विषय है। इससे समस्त विश्व धरण किया जाता है। जीवात्मा, परमात्मा की चेतन प्रकृति है। (गीता 7.45) परमात्मा सत् चित् आनन्द रूप है जो केवल आत्मानुभूति (Self-realization) का विषय है। सत्य वह है जो तीनों कालों में अपरिवर्तित रहता है। इन्द्रियों का विषय नहीं है। पृथ्वी में गंध, जल में स्वाद, सूर्य–चन्द्र में प्रकाश, बुद्धिमान की प्रज्ञा, बलवानों का आसक्ति सहित बल ये परमात्मा के रूप है।

ज्ञानी के लक्षण निम्नलिखित है :–

1. लोक–परलोक के भोगों में आसक्ति न होना।
2. अहंकार न होना।
3. नश्वर संसार में जन्म, मृत्यु, जरा–व्याधि आदि क्षेत्रों पर बार–बार चिंतन करना।
4. पुत्र, स्त्री, घर, धन आदि नाशवान् पदार्थों में आसक्ति व ममता न होना।
5. समता बुद्धि।
6. परमात्मा की अनन्य निष्काम भक्ति।
7. एकांत व शुद्ध देश में रहने का स्वभाव।
8. विषयी लोगों से दूरी रखना।
9. अध्यात्म ज्ञान में नित्य स्थित।
10. तत्त्व ज्ञान का अर्थ रूप परमात्मा को ही देखना। (गीता0 13.8–11)

ज्ञान के बारे में प्रधान इकाई का अध्ययन आप कर चुके हो। एक बार उसे पुनः दोहरा लीजिये।

3.5 समता तथा ज्ञान के बीच अन्तर :

आप इस बात पर विशेष ध्यान दें कि समता का सम्बन्ध बुद्धियोग से है। यह मन बुद्धि की स्थिरता से सम्बन्ध रखता है। द्वन्द्वों का मन बुद्धि पर प्रभाव न पड़े ऐसी मन की स्थिति को समता बुद्धि या स्थितप्रज्ञ स्थिति कहते हैं।

ज्ञान का सम्बन्ध वेदान्त तथा सांख्य योग (कर्म संन्यास) से है। स्थित प्रज्ञ तथा ज्ञान योगी के लक्षण अलग–अलग हैं। ज्ञानी में स्थित प्रज्ञ बुद्धि के अलावा और भी अनेक गुण होने चाहिए। हाँ, इतना अवश्य है कि स्थितप्रज्ञता या समता बुद्धि के बिना तो

कोई भी योग सफल नहीं होता। न ज्ञान योग, न भक्ति योग न कर्म योग, कोई भी इसके बिना सफल नहीं होता है।

समता बुद्धि का क्षेत्र मन, बुद्धि (अन्तःकरण) की स्थिति तक सीमित है जबकि ज्ञान का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। परन्तु समता बुद्धि की प्रयुक्ति केवल ज्ञान तक ही सीमित न होकर भक्ति योग व कर्म योग तक भी विस्तृत है।

3.6 समता तथा ज्ञान के बीच सम्बन्ध :

समता बुद्धि ज्ञानी का दस में से एक लक्षण है। परन्तु है यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण। समता बुद्धि के बिना ज्ञानी का पतन हो जाता है। आप यह भी कह सकते हैं कि बिना समता बुद्धि के कोई ज्ञानी कहला भी नहीं सकता।

यह भी कह सकते हैं आप कि ज्ञानी होने पर ही व्यक्ति समता बुद्धि के लक्षण की ओर आगे बढ़ता है। अज्ञानी तो द्वन्द्वों में उलझा रहता है। उसे तो स्थिति प्रज्ञ स्थिति का ज्ञान ही नहीं होता।

समता बुद्धि प्राप्त होने के बाद यह संन्यास योग, भक्ति योग, कर्म योग में से कोई भी विकल्प चुन सकता है।

अस्थिर बुद्धि वाले संशयात्मा के तो लोक–परलाक ही नष्ट हो जाते हैं। (गीता 4.40)

ज्ञान की प्रयुक्तियाँ (Application) भी समता बुद्धि से बहुत विस्तृत हैं।

1. मोह नहीं होगा। ज्ञानी सम्पूर्ण भूतों को आत्मवत् देखेगा तथा फिर सब भूतों को परमात्मा में देखेगा। (4.45)
2. महापापी भी ज्ञान की नौका द्वारा पाप सागर से तर जायेगा। (4.36)
3. ज्ञानी रूपी अग्नि में सब कर्म भस्म हो जाते हैं। (4.37)
4. कर्मयोगी ज्ञान को अपनी अन्तरात्मा में पा लेता है। (4.38)
5. केवल जितेन्द्रिय, साधन परायण तथा श्रद्धावान् मनुष्य की ज्ञान को प्राप्त कर परमशांति को प्राप्त करता है। (4.39)

3.7 समता तथा ज्ञान की आवश्यकता/महत्त्व :

द्वन्द्वों के बीच शांति से जीवन जीने के लिए समता बुद्धि होना आवश्यक है। तभी सही निर्णय ले सकता है। असफलता को पचाने की यह प्रभावशाली औषधि है। समता बुद्धि सांख्य योग या कर्म सन्यास की सफलता के लिए महत्त्वपूर्ण सीढ़ी है। भक्ति योग करना हो तो भी समता बुद्धि वाला ही व्यक्ति भक्ति कर सकता है। किसी भी कार्य योग की सफलता के लिए भी समता बुद्धि आवश्यक है। समता बुद्धि व्यक्ति को तनावग्रस्त होने या अवसाद का शिकार होने से बचा देता है। कार्यक्षमता में वृद्धि होती है, शारीरिक व मानसिक बीमारियों से बचाव होता है, दीर्घ एवं स्वस्थ जीवन जी सकते हैं, चिकित्सा पद होने वाले व्यय में भारी बचत होती है। व्यक्ति भ्रम, अस्थिर बुद्धि, अनिर्णय, दीर्घसूत्रता आदि मंहगी समस्याओं से बच जाता है। उच्च पद/नेतृत्व वालों के लिए तो समता बुद्धि होना और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि देश या संगठन का भविष्य उनकी बुद्धि की समता ही निर्धारित करती है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ज्ञान की आवश्यकता/महत्त्व का विस्तृत अध्ययन प्रथम इकाई में आप कर चुके हो। उसे आप पुनः दोहरा लीजिये। संक्षेप में ज्ञान व प्रकाश है जो अज्ञान का अंधेरा दूर करके आपको परमात्म तत्व का साक्षात्कार करा देता है। अपने भीतर बैठे परमात्मा की अनुभूति आपको पाप करने से बचायेगी। सब प्राणियों को आत्मवत् देख कर आप उनसे अच्छा व्यवहार करोगे। सब सृष्टि परमात्मा का ही रूप है। यह समझ में आने के बाद आप किसी के प्रति हिंसा, शोषण, छल–कपट का व्यवहार नहीं करोगे। आप स्वतः ही आत्मानुशासन का पालन करोगे। आप स्वार्थ के बजाय परमार्थ कार्य पर आगे बढ़ोगे। स्वयं, परिवार, समाज, प्रकृति तथा समग्र अस्तित्व में शांति, समरसता व समझदारी का विकास होगा। आत्मा को परमात्मा का अद्वैत दर्शन जीवन में उतरने से आप नर से नारायण बन जाओगे तथा परमार्थ परम कार्य के उच्च आदर्श को प्राप्त कर जन्म–मृत्यु–पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त हो सकोगे। दैनिक सम्पदा युक्त समाज में शांति, समरसता, समृद्धि का विकास होगा।

3.8 समता तथा ज्ञान के अभाव के दुष्परिणाम :

समता बुद्धि के अभाव का अर्थ है अस्थिर या चंचल बुद्धि। संकल्प–विकल्प, भ्रम/संशय की स्थिति। इसके कुछ गंभीर दुष्परिणाम हम यहाँ बतलाते हैं।

कुछ गंभीर दुष्परिणाम हम यहाँ बतलाते हैं।

1. अनिर्णय के कारण अच्छे अवसर खो देना।
2. निर्णय बार–बार बदलने के कारण नेतृत्व की विश्वसनीयता गिरेगी।
3. मानसिक तनाव की गंभीर बीमारी, जो अनेक प्राणघातक बीमारियों की माता है, का बढ़ना।
4. असफलता न पचा पाने पर बीमारियों तथा आत्म हत्याओं में वृद्धि। यह समस्या युवा परीक्षार्थियों में व किसानों में बढ़ रही है।
5. सफलता व पचने पर अहंकार व राग–द्वेष में, ईर्ष्या व जलन में वृद्धि होने से मानवीय सम्बन्ध बिगड़ना।
6. कार्य क्षमता में गिरावट/उत्पादन व उत्पादकता में गिरावट। स्वास्थ्य व्यय में वृद्धि।
7. व्यक्ति, परिवार, समाज (संगठन), पर्यावरण तथा समग्र अस्तित्व में समझ, समरसता, शांति व समृद्धि में गिरावट तथा बढ़ता हुआ असंतुलन।

ज्ञान का अभाव अर्थात् अज्ञान की वृद्धि होने के कारण निम्नलिखित दुष्प्रभाव होंगे–

1. नास्तिकता का प्रचार
2. मनमाने कल्पित पंथ तथा उनके बीच संघर्ष
3. काम, क्रोध, लोभ, राग–द्वेष, अहंकार में वृद्धि के कारण संघर्ष, शोषण में वृद्धि, युद्ध करना।
4. खाओ, पीओ, मजा करो की विकृति बढ़ने से संस्कारों का पतन। दुःखी लोग दूसरों को भी अधिक दुःखी करते हैं।

5. स्वार्थ ही परमार्थ बन जाना।

6. मानव का पशु व दानव बन जाना।

7. नीतिविहीन अमर्यादित उपभोग के कारण प्रकृति का शोषण होने से प्राकृतिक कोप के कारण अस्तित्व के लिए रहता।

8. विश्व में परमाणु युद्ध का भय होने के कारण यानी विनाश की संभावनाएँ।

आप यह अनुभव कर सकते हैं कि वर्तमान संसार में संसार तथा मानव की रक्षा केवल गीता ज्ञान से ही हो सकती है। स्थित प्रज्ञ स्थिति व ज्ञान (आत्मा–परमात्मा का तत्व ज्ञान) का अभाव व्यक्ति, परिवार, समाज, पर्यावरण तथा समग्र अस्तित्व के सभी स्तरों पर अशांति व संघर्ष को बढ़ा रहा है। आपसी समझ घट रही है। मानव ही मानव का शत्रु बन चुका है।

3.10 मन तथा ज्ञान की सीमायें :

मन यदि नियंत्रित है तो यह आपका सबसे बड़ा मित्र है परन्तु अनियंत्रित मन आपका सबसे बड़ा शत्रु है। मन ही मोक्ष तथा बंधन का कारक है। (गीता 6.5)

समता बुद्धि योग पर प्रश्न चिन्ह लगाते हुए अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा, ''आपने जो समता बुद्धि योग कहा उसे मैं मन से चंचल होने के कारण व्यवहार में संभव नहीं मानता। यह तो तेज वायु की तरह बलवान होने के कारण उस पर नियंत्रण करना कठिन है।'' (गीता 6.33)

श्रीकृष्ण ने अर्जुन की बात का समर्थन करते हुए कहा, ''तुम सही कहते हो। मन बहुत बलवान होने के कारण उसे वश में करना बहुत कठिन है। परन्तु मन पर नियंत्रण करने के दो उपाय हैं–

1. वैराग्य, 2. ध्यान योग का नियमित अभ्यास। (गीता 6.34)

ध्यान योग या पतंजलि के अष्टांग योग का वर्णन गीता के अध्याय 6 में भी श्रीकृष्ण ने विस्तार से किया है। संक्षेप में हम उसका यहाँ वर्णन करते हैं।

''शुद्ध भूमि पर क्रमशः कुश, मृगछाला तथा साफ वस्त्र बिठाकर आसन बनायें जो बहुत ऊँचा व बहुत नीचा न हो। चित्त और इन्द्रियों की क्रियाओं को वश में रखते हुए मन को एकाग्र करो। अन्तःकरण की शुद्धि के लिए योग का अभ्यास करो। शरीर, सिर व गले को समान (सीध में) स्थिर रख कर बैठो। नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि केन्द्रित करो। अन्य कहीं दृष्टि न जाय। ब्रह्मचर्य व्रत रखो। भयहीन व शांत अन्तःकरण वाल योगी मन को नियंत्रण करने का अभ्यास करो। मन भगवान में स्थिर रखो।'' (गीता 6. 11–14)

श्रीकृष्ण सावधान करते हुए कहते हैं, ''यह योगान्यास मर्यादित आहार–विहार करने वाले का हरि सिद्ध होता है। बहुत खाने वाले या बहुत भूखा रहने वाले का, बहुत सोने वाले या बहुत जागने वाले का योग सिद्ध नहीं होता।'' (गीता 6.16–17)

श्रीकृष्ण स्थिर मन की तुलना वायुरहित स्थान में दीपक की स्थिर लौ से करते हैं। (गीता 6.19)

अर्जुन ने पुनः एक और प्रश्न किया कि, ''संशय की कमी से यदि योगी भ्रष्ट हो जाय तो उसकी क्या स्थिति होगी?'' (गीता 6.37)

श्रीकृष्ण ने कहा, ''योगी नष्ट नहीं होगा। सकाम हो तो स्वर्ग में सुख भोग कर वह अच्छे आचरण वाले श्रीमान के घर में जन्म लेगा। सकाम नहीं है तो वह किसी योगी परिवार में जन्म लेगा। वहाँ अपना योगाभ्यास आगे चालू कर देगा। (गीता 6.41–46)

श्रीकृष्ण ने यह भी स्पष्ट किया कि ''तापसी से योगी प्रिय होता है। ज्ञानी से भी योगी श्रेष्ठ है। सकाम कर्म करने वाले से कर्मयोगी श्रेष्ठ है। अर्जुन तुम योगी बनो।'' (गीता 6.46) ''योगियों में भी श्रद्धावान योगी जो मुझमें अन्तरात्मा को लगाकर निरंतर मेरा भजन करता है व मुझे परम श्रेष्ठ मान्य है।'' (गीता 6.47)

वेदों का सांख्य दर्शन जो भगवान् कपिल द्वारा प्रणीत है, नास्तिक है तथा सभी कर्मों के त्याग लेकर सन्यास की बात करता है। गीता में श्रीकृष्ण कर्म सन्यास के बजाय कर्म फल सन्यास को श्रेष्ठ मानते हैं। (गीता 18.2)

सन्यासी को भी लोकहित/लोक कल्याण के कर्म अवश्य करने चाहिए।

ज्ञान मार्ग शुष्क होता है। ज्ञानी का पतन अंहकार के कारण होने का भय रहता है। अतः ज्ञानी जो भी परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए। भक्ति का ज्ञान की शुष्कता व अहंकार का इलाज है।

यज्ञ, दान, तप आदि कर्म की निष्काम भाव से करना उचित है। (गीता 18.6)

आप स्वयं के अनुभवों के आधार पर निम्नलिखित प्रयोग करके उनके निष्कर्षों का वर्णन करो :–

1. 'मन मांगे मोर' पर आप कैसे अंकुश लगाते हैं? उपभोग करो परन्तु उसमें आसक्त न हो। आवश्यकता को आदत या अनिवार्यता में मत बदलो।
2. पढ़ने बैठते हैं तो मन घूमने या खेलने में चला जाता है। पढ़ा हुआ याद नहीं रहता। मन पर नियंत्रण करने के लिए अष्टांग योग का निरंतर अभ्यास करके उससे क्या लाभ हुआ यह बतलाओ।
3. भगवान नहीं होते। ऋण लेकर भी खाओ, पीओ, मजे करो। यज्ञ, दान, तप आदि सब व्यर्थ है। अच्छी तरह जीओ। मरने के बाद आगे कुछ नहीं होता। मनुष्य जीवन काम की उपज है तथा काम ही इसका एक मात्र लक्ष्य है।

ऐसे अज्ञानी के जीवन की तुलना आप ज्ञानी के जीवन से करो। कौन अच्छा जीवन जी रहा है? उधार लेकर मजे करने वालों का जीवन कैसा बीतता है, यह बताये।

3.11 सारांश

समता बुद्धि स्थिर बुद्धि द्वन्द्व मुक्त होती है। कामना रहित है। आत्म संतुष्टि रहती है। सुख–दुःख दोनों समता बुद्धि द्वारा स्वीकार्य होते हैं। इन्द्रिय विषयों में आसक्ति नहीं होती। इससे ज्ञान योग (सन्यास), भक्ति योग तथा कर्मयोग की सफलता का आधार तैयार होता है।

अस्थिर बुद्धि की अनेक हानियाँ तथा क्षमता बुद्धि के अनेक लाभ तथा महत्त्व हैं इसी प्रकार ज्ञान का अर्थ, महत्त्व या आवश्यकता का वर्णन किया गया है। ज्ञान के लाभ व अज्ञान की हानियों का भी अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। स्थित प्रज्ञ व ज्ञानी के लक्षणों का वर्णन किया गया है। स्थिर प्रज्ञ स्थिति तथा ज्ञान का सम्बन्ध तथा अन्तर भी स्पष्ट किये गये हैं। गीता के इस ज्ञान की आज के विश्व में विशेष महत्त्व भी रेखांकित किया गया है। मन चंचल है। इसे अभ्यास तथा वैराग्य से वश में करें।

3.12 पारिभाषिक शब्दावली

ज्ञान, स्थितप्रज्ञ स्थिति (समता बुद्धि), कर्म सन्यास (ज्ञान योग) भक्ति योग, कर्म योग।

3.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. जयदयाल गोयन्दका : श्रीमद्भगवद्गीता– तत्त्वविवेचनी हिन्दी टीका, गीता प्रेस, गोरखपुर।
2. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद : भगवद्गीता– यथा कथा, इस्कॉम, जुहु, मुंबई
3. Khandelwnt et al : Shriman Bhagwadgita for Transformation in Personality of youth, Himalaya, Mumbai, 2024
4. खण्डेलवाल एन0एम0 : भारतीय प्रबन्धन गुरुश्रीकृष्ण, मीझा (फ्रेंग्स), दिल्ली, 2023

3.14 बोध प्रश्न

1. समता बुद्धि या स्थित प्रज्ञ का अर्थ व लक्षण बताओ।
2. समता बुद्धि का क्या महत्त्व है?
3. समता बुद्धि की प्रयुक्तियाँ बतलाओ।
4. बुद्धि योग तथा ज्ञान योग का अन्तर बताओ। दोनों के बीच सम्बन्ध स्पष्ट करो।
5. ज्ञान का अर्थ तथा ज्ञानी के लक्षण बताओ। ज्ञान का क्या महत्त्व है?
6. समता बुद्धि व ज्ञान की सीमाओं का वर्णन करो।
7. चंचल मन पर नियंत्रण के उपाय बताओ।
8. ज्ञान के समता बुद्धि का अभाव किन समस्याओं को जन्म देता है?

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY